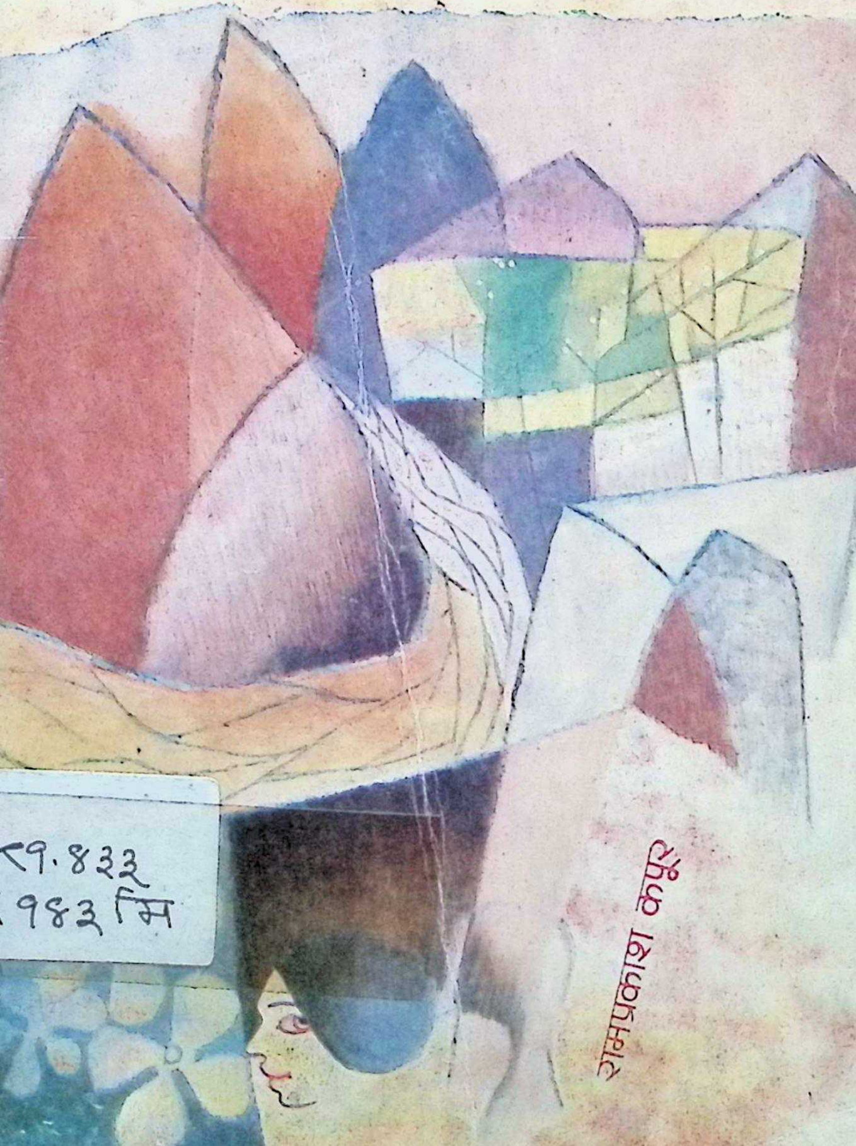
मिस मसूरी



रामप्रकाश कपूर

राम प्रकाश कपूर

मिस मसूरी

रामप्रकाश कपूर

सन् १९३५ में डेहरी आनसोन में जन्मे रामप्रकाश कपूर काशी हिन्दू विश्व-विद्यालय के एम० ए० एल. एल. बी. हैं। आपने अब तक पांच उपन्यास एक कहानी संग्रह एक समालोचना ग्रन्थ, तथा दो बाल साहित्य की पुस्तकें लिखी हैं। उपन्यास 'प्लेटफार्म' तथा कहानी संग्रह 'हर सिंगार के फूल' उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत। नये मुसाफिर बहुचर्चित। सम्प्रति वाराणसी के प्रमुख व्यवसायी।

संपर्क सूत्र
'कपूर भवन,' रवीन्द्रपुरी
भेलूपुर, वाराणसी

प्रचारक बुक क्लब
हिन्दी प्रचारक संस्थान
पो०बा०१०६, पिशाचमोचन, वाराणसी-२२१००१



मिस मधुरी

भारत के प्रथम बुक क्लब
प्रचारक बुक क्लब
हिन्दी प्रचारक संस्थान
पो० बा० १०६, पिशाचमोचन, वाराणसी २२१००१ के लिए
विजय प्रकाश बेरी द्वारा प्रकाशित तथा
न्यू दीपक प्रेस, प्रहलाद घाट, वाराणसी में मुद्रित
सन् १९७८

Ram Prakash Kapoor
MISS MASOORI
Novel

मूल्य : ३.००
सदस्यों के लिए : १.५०

मिस मसूरी

"ड्राइवर, तेज़ चलो !....."

मोटर की रफ्तार तेज़ हो गई। हज़रतगंज पीछे छूट गया। रायल होटल से गाड़ी आगे बढ़ी। रेडियो स्टेशन करीब आता देख रेखा ने ड्राइवर को गाड़ी अन्दर घुमाने का आदेश दिया।

मोटर पोर्टिको के बाहर रोकनी पड़ी। एक सफेद ब्यूक वहाँ पहले से खड़ी थी। रेखा साड़ी का आँचल संभालते सीधे डायरेक्टर के कमरे में घुसी। वहां कुछ लोग पहले से बैठे थे। डायरेक्टर ने घंटी बजाई। चपरासी आया।

"कुर्सी···!"

रेखा को जल्दी थी।

"नो···नो। थैंक्यू। मुझे नैनीताल एक्सप्रेस पकड़नी है। मेरा कल का प्रोग्राम कैंसिल कर दीजिए। आई एम लीविंग लखनऊ··। मैं आपको इन्फार्म इससे पहले न कर सकी, एक्सक्यूज़ मी, प्लीज !"

और डायरेक्टर के कुछ कहने से पूर्व ही वह झटके से बाहर निकल गई।

ड्राइवर ने इंजन बन्द नहीं किया था। बैठते ही गाड़ी हवा हो गई। सामने चौराहे पर लाल रोशनी का सिगनल था। गाड़ी रुकी। अंग्रेजी के बड़े-बड़े काले अक्षर लाल रोशनी के ऊपर चमक रहे थे···'स्टाप'!

एस''' टी'''ओ'''पी,'''स्टाप, रुको ! रेखा को एक झटका लगा। उसे लगा, उसकी ज़िन्दगी की तेज़ भागती गाड़ी को रोकने के लिए, जैसे लखनऊ वालों ने कोई षड्यंत्र रचा हो ! नहीं, नहीं ! वह अब यहां एक क्षण नहीं रुक सकती।

हरी रोशनी के साथ ड्राइवर ने गाड़ी आगे भगा दी। स्टेशन आया। रेखा उतरी। मोटर देख, कुली भागे आए। ड्राइवर सामान उतरवाने लगा। रेखा आगे बढ़ी।

फर्स्ट क्लास टिकट-विंडो पर जाकर रेखा ने सौ रुपये का नोट निकाला—"वन फर्स्ट-क्लास, नैनीताल ! ओ, सारी, काठगोदाम !"

"रिटर्न टिकट ?"

रेखा को पुनः एक हल्का शाक लगा। वह यहां किसके लिए वापस आएगी ? क्या रह गया है अब यहां !

"नो, नो !" अनायास उसके मुंह से एक तेज़ उच्छ्वास निकला।

रुपये बिना गिने टिकट के साथ उसने पर्स में डाल लिए। ड्राइवर कुली के साथ पास आया। उसे छुट्टी देती रेखा बोली—"तुम गाड़ी लेकर फैक्ट्री वापस चले जाना। मेरे बारे में किसी से कुछ कहने की जरूरत नहीं !"

कुछ याद कर पर्स खोला। दस-दस के दो नोट उसके हाथ पर रखती बोली—"अपने बच्चों के लिए लखनऊ की मिठाई लेते जाना !"

ड्राइवर की आंखें भर आईं।

रेखा के पीछे-पीछे कुली भागने लगा। वैसे तो रेखा चल ही रही थी, मगर उसके साथ कदम मिलाने के लिए कुली को दौड़ना पड़ रहा था। गार्ड घड़ी देख रहा था। रेखा ने उससे खाली बर्थ के सम्बन्ध में पूछा। उसने कंडक्टर से बात करने को कहा।

कंडक्टर को पकड़ा। वह गर्दन हिलाते बोला—"नो एकमोडेशन। पहले से सब रिज़र्व हैं !"

सिगनल गिर चुका था। गाड़ी छूटने में दो मिनट शेष थे। रेखा झुंझलाई—"जब एकमोडेशन नहीं रहता तो टिकट क्यों सेल करते हैं ?..."

कंडक्टर आगे बढ़ गया। रेखा एक डिब्बे में धुसी। सभी वर्थ रुकी पड़ी थीं। बिस्तर बिछे थे। सरदारजी पायजामा व गंजी पहने अपने पूरे कुनवे के साथ जमे हुए थे। दाढ़ी पर हाथ फेरते वोले—'नो वैकंसी !"

"ह्वाट !" रेखा की भौहें तन गईं—"मैं नौकरी नहीं खोज रही हूं। मुझे बैठने की जगह चाहिए।"

सरदारनी अकड़ी—'क्यूं शोर पाया है, साडी सीटें रिजर्व हैं !"

रेखा ने घड़ी देखी। गाड़ी छूटने वाली थी। वहस न कर वह नीचे उतरी। गार्ड ने सीटी दे दी। वह बगल के डिब्बे में घुसी। सेकेंड क्लास का डिब्बा था। वाहर औरत की तस्वीर वनी देखकर वह समझ गई, लेडीज कम्पार्टमेण्ट है। कुली ने सामान रखा। गाड़ी चल पड़ी।

रूमाल से माथे का पसीना पोंछती रेखा सीट पर बैठ गई। उसने सन्तोष की ठंडी सांस ली। आखिर इतनी भागदौड़ के वाद गाड़ी मिल ही गई। मगर फर्स्ट क्लास का टिकट खरीदकर सेकंड में बैठना, उसे बुरा लग रहा था। उसे याद आया, एक बार मोटर रास्ते में बिगड़ गई, तब उसे रिक्शे से यूनिवर्सिटी जाना पड़ा। रिक्शे पर बैठी वह अपने को कितना छोटा अनुभव कर रही थी ?...

सोचने लगी, 'लोग बेकार चिल्लाते हैं, देश में गरीवी है ! गरीवी होती तो आज सिनेमा के टिकट चोर बाजार में नहीं बिकते, फर्स्ट क्लास में बैठने की जगह का अभाव न होता, मोटरों के लिए गैरजों का अकाल न होता !'... जाने क्या-क्या वह सोचती चली जा रही थी, तभी एक मीठी आवाज ने उसे थपकी दी—"कहां जा रही हो, बहन !"

अन्तिम शब्द कानों में जरा चुभा ! यह नई बहन कहां से पैदा हो गई ? रेखा ने मुड़कर देखा भी नहीं। होगी कोई मास्टरनी, सेकंड में मुझे

बैठा देख लिया तो बहन बनाने की हिम्मत पड़ गई। उसने पर्स में से फर्स्ट क्लास का टिकट निकाला। उसे इस प्रकार उलटने-पलटने लग गई, जिससे वह जता दे, वह क्या है।

मगर टिकट पर यह कहीं नहीं छपा था कि रेखा सेठ दीवानचन्द की इकलौती पुत्री है। उसके पिता की चीनी, कपड़े व कागज की मिलें सारे भारत में फैली हुई हैं। वह करोड़पति बाप की लाडली बेटी है, जिसके लिए जिन्दगी एक हरा-भरा समतल मैदान है, जिसमें सब ओर रंग-बिरंगे फूल ही फूल हैं!

"तुम बहुत परेशान नजर आती हो!"

रेखा की कनपटियां लाल हो उठीं। मुझे 'तुम' कहकर सम्बोधित करती है, बदतमीज! उसने घूमकर देखा। दो शान्त-स्निग्ध नयन उसीमें कुछ ढूंढ़ रहे थे।

"नमस्ते!"

अनिच्छापूर्वक उत्तर देना पड़ा।

"आप कहां जा रही हैं?"

रेखा चाहकर भी गुस्सा न कर सकी। फिर भी टालने के लिए बोली—"जहां गाड़ी जाती है।"

बगलवाली सांवली लड़की खिलखिलाकर हंसी—"मैं जानती थी, आप यही जवाब देंगी। मगर एक बार फिर जरा सोचिए, कहीं आप कुछ गलत तो नहीं कह गई!"

रेखा का कौतूहल बढ़ा—"आपका मतलब नहीं समझी!"

"मेरा ख्याल है आप नैनीताल जा रही हैं। मगर गाड़ी तो काठगोदाम तक ही जाती है!"

रेखा कुछ झेंप गई।

सामान्यतः दो महिलाओं के लिए वार्तालाप का यह छोटा-सा मधुर प्रसंग परस्पर परिचय का कारण बन जाता। लेकिन

रेखा की मनःस्थिति इस वक्त कुछ और ही थी। रेखा को चुप देखकर सहयात्री का उत्साह ठंडा पड़ गया।

सामनेवाली सीट पर कुछ पंजाबी महिलाएं बैठी थीं। उनकी कलाइयां सोने की चूड़ियों से मढ़ी हुई थीं। कानों में भी लम्बे झुमके पड़े हुए थे। रेखा अपने हाथ को हीरे की अंगूठी घुमाते हुए सोचने लगी—'सोना तो अब आउट आफ डेट हो गया। सिर्फ गंवार ही सोने-चांदी के जेवर पहनते हैं !'

इस कल्पना से उसे बड़ी राहत मिली। गले में पड़े सफेद मोतियों के हार का ध्यान आया। वह अपनी जगह सुरक्षित था। अभी पिछले वर्ष ही तो डैडी ने उसे जन्म-दिन पर भेंट किया था। पूरे पांच हजार का। बम्बई से लाए थे।

सामनेवाली औरत उसके हार को घूरे जा रही थी। रेखा को लगा कि उसकी नजर से मोती के दाने टूटकर बिखर जाएंगे। उसने झट आंचल से गला लपेट लिया।

महिला ने मुस्कराते हुए पूछा—"यह हार कितने का मिला?"

रेखा ने पुनः आंचल हटाकर, उंगली हार में फंसा उसे एक नजर देखते हुए कुछ गर्व से कहा—"मुझे प्रेजेण्ट में मिला है।"

महिला अपने साथ की औरत को इशारे से हार दिखाते हुए कहने लगी—"लखनऊ में इससे भी ज्यादा चमकते मोतियों के हार पांच-सात रुपये के पटरियों पर आसानी से मिल जाते हैं। बड़ी दुकान वाले इसीका पन्द्रह बीस तक ले लेते हैं!"

रेखा बौखला उठी। वह किन गंवारों के बीच आ फंसी। इन्हें झूठे व सच्चे मोतियों की भी पहचान नहीं?

सीतापुर स्टेशन आया। गाड़ी रुकी। रेखा ने कुली बुलाया—"सामान उतारो!"

सांवली लड़की ने पूछा—"यहां क्यों उतर रही हो?"

"तुमसे मतलब !" रेखा ने झल्लाकर कहा—"फर्स्ट क्लास का टिकट खरीदकर सेकंड में बैठना ही मेरी भूल थी। जहां लोगों को झूठे-सुच्चे मोतियों की पहचान नहीं, उनके साथ भला इतना लम्बा सफर कैसे कटेगा !"

रेखा नीचे उतरी। पीछे से एक आवाज सुन पड़ी—"दोष इनका या मोतियों का नहीं, तुम्हारा है। तुम जो मोती पहनकर भी सीपी में बन्द रहना चाहती हो !"

रेखा आगे बढ़ गई। सब फर्स्ट क्लास डिब्बे अन्दर से बन्द थे। दरवाजा पीटने पर भी कोई नहीं खोलता। कुली बोला—"मेम साहब, थर्ड क्लास में तो लोग डरकर रात में खोल भी देते हैं। मगर फर्स्ट क्लास में कोई नहीं खोलता ?...."

एक 'कूपे' का दरवाजा खुल गया। नवदम्पति अन्दर बैठे थे। चाय पीते हुए उन लोगों ने बन्द खिड़की के शीशे से रेखा को परेशान इधर-उधर चक्कर काटते देखा। तरस खाकर दरवाजा खोल दिया।

रेखा झिझकी।

"आपको आपत्ति न हो तो ऊपर की बर्थ हम दे सकते हैं। वैसे यह पहले से रिजर्व है।" युवक बोला।

रेखा ने लाल चूड़े पहने बैठी दुल्हन के शर्म से लाल गुलाबी गाल देखे। संकोच से बोली—"आई डोण्ट वाण्ट टू डिस्टर्ब यू...!"

"नो...नो ! आप चिन्ता न करें। वी विल एडजस्ट अवरसेल्व्स ...!"

कुली ने ऊपर की बर्थ खाली कर सब सामान सीट के नीचे रख दिया। रेखा का बिस्तर ऊपर लगा दिया।

गाड़ी चली। रेखा फ्रेश होकर ऊपर लेट गई। युवक ने धीरे से पूछा—"लाइट डिम कर दूं !"

"यस प्लीज !"

आसमानी नीला मध्यम प्रकाश डिब्बे में हो गया। अन्दर से दरवाजे में युवक ने बोल्ट लगाया। दुल्हन बिस्तर ठीक करने लगी।

रेखा दुल्हन से बोली—"हैपी नाइट, स्वीट ड्रीम्स…!"

करवट बदलकर वह लेट गई। गाड़ी द्रुतगति से भागी जा रही थी। पहियों की खड़खड़, इंजन का चीत्कार ही कानों में गूंज रहा था।

रेखा बहुत ज्यादा थकी थी। मगर न जाने क्यों आंखों में नींद ही नहीं पड़ रही थी। नीचे बर्थ पर चल रहा रोमांस, प्रेमपूर्ण सम्भाषण, चुम्बनों की मधुर ध्वनि उसे बेचैन किए डाल रही थी। चूड़ियों की खनक सोने ही नहीं देती।…

अच्छा होता वह उन गंवारों के बीच सो रही होती जो हर अपरिचित को बहन और सुच्चे मोती को झूठे मोती समझा करते हैं। वहां शायद आंख लग भी जाती। मगर नवदम्पति के कृपापूर्ण स्नेह-आमंत्रण को वह कैसे ठुकरा देती!

गाड़ी के पहिये ही नहीं, दिमाग के पहिये भी गतिशील थे।

हज़रतगंज की रंगीन शामें, 'मेफेयर' से बाहर निकलते हुए कहकहों की फुलझड़ियां, 'रायल-केफ' की डांस-नाइटें सब बन्द पलकों के कैनवस पर एक-एक कर फ्लैश कर रही थीं। आज वह उस सोसाइटी से दूर भागी जा रही थी। उसे नैनीताल जाने की जरूरत इसलिए नहीं पड़ी कि मई की चिलचिलाती धूप से उसकी काया मुर्झा रही थी या चेन्ज के लिए पहाड़ पर जाना आवश्यक हो गया था! एयरकंडीशंड उसका अपना कमरा नैनीताल-मसूरी ही नहीं… गुलमर्ग से भी ज्यादा आजकल ठंडा रहता है।

उसे याद आया, कमल की शादी का निमंत्रण-पत्र वह गलीचे पर ही छोड़ आई थी।……कमल, जिसके साथ उसके सपने जवान हुए, आज कितना पराया हो गया था। रह-रहकर उसके दिमाग की नसें तन जाती। एक दबी आग अन्दर सुलग रही थी। उसी जलन से बेचैन, वह बिना डैडी को सूचित किए, लखनऊ छोड़ भागी जा रही थी।

…'धोखेबाज़'…नीच ! अपने को समझता क्या है ? मैंने पानी की तरह पैसा बहाया, उसके लिए प्रेस खोला, पत्रिका निकाली । पब्लीसिटी दी, आज कलाकार बन बैठा है । कहता है—'मुझे तुम सोने के पिंजड़े में कैद करना चाहती हो ?…'

अच्छा हुआ, इतनी जल्दी आंख खुल गई । दीपा ठीक ही कहती थी, मनुष्य के संस्कार नहीं जाते । दो टके का आदमी अपनी औकात से ज्यादा सोच भी नहीं सकता । कल्पना में है ही क्या ? फर्स्ट डिवीज़न एम० ए० में क्यां पा लिया, दिमाग आसमान पर चढ़ गया । यूनिवर्सिटी में नौकरी क्या मिल गई, तनकर चलने लगी ।

उसने मन ही मन प्रतिज्ञा की, अब वह कभी दोनों का मुंह न देखेगी ।…उस दिन बेकार ही कार पर लिफ्ट दी । वह कालेज जा रही थी, रास्ते में कल्पना रिक्शे पर जाती दिखाई दी । कार रोककर उसे बैठा लिया । कमल भी बैठा था । उसीने उनका परिचय कराया । वही परिचय आज विवाह में परिणत हो रहा है !

उसकी आंखें भर आईं । उसने तकिये में मुंह छिपा लिया ।

'कुली-कुली' का शोर सुनकर उसकी आंख खुली । सवेरा हो चुका था । हल्द्वानी पर गाड़ी खड़ी थी ।

"गुड मार्निंग । आप यहीं उतर रहे हैं ?" रेखा ने नीचे उतरते हुए पूछा ।

"एक रिलेटिव यहां हैं, उनसे जरा मिलना था । शाम तक नैनीताल पहुंच जाएंगे ।…"

परस्पर अभिवादन कर वे विदा हुए । दरवाजे पर खड़ी रेखा उस जोड़े को देखते सोच रही थी…कमल व कल्पना भी हनीमून के लिए मसूरी जानेवाले हैं !

"मेमसाहब, चाय !"

रेखा की तन्द्रा टूटी । उसने सर हिला दिया ।

चाय का घूंट भरा। पानी ज्यादा गर्म था। जीभ में छाले पड़ गए। प्याला रखकर टोस्ट पर मक्खन लगाने लगी।

रात सेकण्ड क्लाश में बैठी महिलाओं के साथ किए हुए व्यवहार को याद कर उसे दुःख हुआ। वह तो जीवन की खुली धूप-छांह को अनुभव करने के लिए ही अपने शीशमहल से अकेली बाहर निकली है। तभी न साथ, न वह अपनी कार लाई है, न ड्राइवर, न नौकर-चाकर! उसे अपने पर झुंझलाहट हुई, क्यों फर्स्ट क्लास का टिकट खरीदा? नये जीवन को जीने के लिए पुराने संस्कारों तथा उच्चता के दम्भ का गला घोंटना होगा।

'···दोष इनका या मोतियों का नहीं, तुम्हारा है। तुम जो मोती पहनकर भी सीपी में वन्द रहना चाहती हो···।'

नहीं, नहीं··मुझे नहीं चाहिए मोती हीरे···जवाहरात! उसने गले की माला व हाथ की अंगूठी उतारकर अटैची के पाकेट में डाल दी। ···वह आज से एक साधारण लड़की की जिंदगी जिएगी। उसे भूल जाना होगा, उसके डैडी क्या हैं? वह क्या थी·· कमल कौन था···उसने उसे कभी धोखा दिया भी या नहीं···!

काठगोदाम पर गाड़ी रुकी। कुलियों की संख्या यात्रियों की तुलना में वहुत कम थी। मगर फर्स्ट क्लास की तरफ कुली पहले दौड़ते हैं। रेखा ने सामान उतरवाया। वह आगे बढ़ी।

रातवाली सांवली लड़की कुली को पुकार रही थी, मगर सभी कुली सामान उतारने-लादने में व्यस्त थे। किसीने उधर ध्यान न दिया। रेखा ने कुली को रोका। उसने सामान प्लेटफार्म पर रखने को कहा। कुली कुछ समझा नहीं। रेखा ने आदेश दिया—"सामने से बीवीजी का सामान उतारकर लाओ।"

सांवली लड़की ने कुली को रेखा के पास रुकते देखकर टोका—"रुके क्यों, चलो आगे!"

रेखा ने आगे बढ़कर उसका हाथ पकड़ा—"रात बहन कहकर पुकार रही थी, इस वक्त पहचानने को भी तैयार नहीं !"

मुस्कराने का अभिनय करते वह बोली—"झूठे व सुच्चे मोतियों की जिन्हें पहचान नहीं वे भला तुमसे बहन का सम्बन्ध कैसे निभा सकती हैं ?...'

"अच्छा तो आप नाराज़ हो गईं !" रेखा खिलखिला पड़ी।

सांवली लड़की की आंखें फटी रह गईं। उसे आश्चर्य हो रहा था कि यह संगमरमर की मूरत हंसना भी जानती है।

"तुम्हारा नाम क्या है, बहन !" रेखा ने पूछा।

"बहन को नाम से ही पुकारना चाहो तो मुझे सुमन कह सकती हो।" सांवली लड़की ने उत्तर दिया।

चलते हुए रेखा ने अपना परिचय दिया—"बचपन में मैं बहुत दुबली-पतली थी इसलिए मां ने मुझे 'रेखा' कहकर पुकारा। पिताजी को नाम पसन्द न था। मगर जब मां चल बसी तो फिर भला पिताजी उनका दिया नाम कैसे भुला देते।"

बाहर निकालते हुए रेखा ने पूछा—"तुम अकेले ही हो या साथ...!"

सुमन ने हाथ दबाते निःसंकोच कहा—"साथ तुम जो हो !....."

और दोनों ही खिलखिला पड़ीं।

२

पहाड़ी चक्करदार सड़क पर बस हिचकोले खाती सरपट भागी जा रही थी।

रेखा जीवन में पहली बार आज बस में बैठी थी। उसका इरादा पहले टैक्सी में जाने का था, मगर सुमन को तब शायद साथ चलने में आपत्ति होती। फिर वह एक साधारण लड़की का जीवन जीना चाहती

थी। कहीं मध्यमवर्ग की साधारण लड़कियां टैक्सी पर बैठती हैं! उनके लिए तो सरकारी बस ही बहुत है!

बस के बीच बैठे हुए उनसे पहली बार जीवन की गर्म सांसों को इतने पास से अनुभव किया। चारों ओर जीवन की हलचल थी, गति थी और था एक उन्मुक्त खुलापन। जहाँ कुछ दिखावा नहीं, आडम्बर या नकल नहीं...सब भीतर-बाहर से एक, स्वच्छंद... एकरस था।

सुमन पहली बार पहाड़ की सैर करने आई थी। बस की खिड़की से बाहर गतिशील प्राकृतिक दृश्यों को देखकर वह आनन्द से विह्वल हो उठी। अपने भाव छिपा न सकी—"वह देखो बहन, नीचे की तारकोल की घुमावदार सड़क कैसी लग रही है, जैसे एक काला नाग लेटा विश्राम कर रहा हो...! अरे, हम कितने ऊपर आ गए। नीचे के मकान तो घरौंदे-से दीख रहे हैं।...वह देखो सामने सूरज की किरणों के बीच पहाड़ की चोटी कैसी चमक रही है।..."

रेखा मुस्कराते हुए बोली—"जब बस से नीचे का दृश्य इतना आकर्षक व लुभावना प्रतीत हो रहा है, तो कल्पना करो हवाई जहाज से यह सब कैसा दीखता होगा!"

ठंडी सांस लेती सुमन बोली—"कल्पना ही करनी है तो हवाई जहाज ही क्यों, स्पुतनिक की बात सोचो! गरीबों के पास सिर्फ सपने ही तो होते हैं! काश! उन्हें पूरा करने के साधन भी उपलब्ध होते!"

रेखा के मर्मस्थल में चोट लगी। उसने बगल में बैठी सांवली सलोनी सुमन को गौर से देखा, आँखों की चमक धुंधली पड़ गई थी। उसने सोचा, अगर वह चाहे तो इस लड़की के सपनों को पंख प्रदान कर सकती है। मगर...इस वक्त तो वह स्वयं एक मामूली लड़की बनी बस द्वारा यात्रा कर रही थी।

तभी बस झटके से एक मोड़ पर रुकी।

सुमन ने प्रश्न किया—"यहाँ क्यों रुक गई ?"

रेखा उठती हुई बोली—"नीचे उतरो। यहाँ ठंडा पानी पिओ तब खुमानी व आड़ू चखो।"

"क्या यहाँ पहले भी आ चुकी हो ?"

"हाँ।"

सुमन कुछ सकपका गई। उसे रेखा एक अनबूझ पहेली-सी दृष्टिगत हुई !···कल रात सेकण्ड क्लास में बैठना जिसे मंजूर न था, सुच्चे मोतियों के हार को झूठा सुनकर जो बौखला उठी थी···वही आज उससे बहनापा जोड़ने को आतुर थी।

पानी बहुत ठंडा था। दस आने सेर खुमानी देखकर सुमन को आश्चर्य हुआ—"कानपुर में यही खुमानी दो-ढाई रुपये सेर बिकती है !"

'तुम कानपुर में रहती हो ?"

"हाँ।"

"मैं तो लखनऊ की समझी थी !" रेखा बोली।

खुमानी खाते हुए सुमन बोली—"रहनेवाली मैं इलाहाबाद की हूँ। नौकरी के सिलसिले में कानपुर जाना पड़ा।"

ड्राइवर हार्न बजा रहा था। सब लोग बस में बैठ गए। बस चल पड़ी।

सुमन ने अपने बारे में तो इतना कुछ बता दिया, मगर रेखा के बारे में कुछ पूछने का साहस न पड़ता। कहीं यह बुरा मान गई तो साथ भी छूट जायगा।

वह खिड़की से बाहर देखने लगी। आगे की सीट पर दो माडर्न 'मजनू' बैठे थे। एक-दूसरे से कह रहा था—"क्या कम्बीनेशन है, ब्लैक एण्ड ह्वाइट !"

और दोनों ठठाकर हंस पड़े।

रेखा को समझते देर न लगी, व्यंग किसपर किया गया है। कोई और अवसर होता तो रेखा बरस पड़ती। मगर इस वक्त वह पिकनिक के मूड में थी।

उसने सुमन से कहा—"पहले सर्कस में जोकर देखने को मिलते थे, आजकल सड़कों पर अमरीकन पैंट में कमर मटकाते 'देशी जोकर' चलते-फिरते मिल जाएँगे !"

लड़के तिलमिला उठे। एक ने पीछे घूमकर देखा और धीरे से पूछा—"आपने मुझसे कुछ कहा ?"

सुमन को समझते देर न लगी, बातों का रुख किधर है। झगड़ा टालने के लिए उसने तुरन्त कहा—"मैं नहीं समझती कि आप अपने को जोकर समझते हैं !"

दूसरे लड़के ने चट फबती कसी—"पहले यह बताइए, आपका हमारे बारे में क्या ख्याल है !"

"यू आर इडियट !" रेखा अपने पर काबू न रख सकी।

लड़के लड़ने पर तैयार हो गए—"शट-अप ! होल्ड योर टंग !"

"यू रास्कल···!" रेखा तैश में उठ खड़ी हुई।

अगर दूसरे लोग बीच-बचाव न करते तो एक क्षण में न जाने क्या कुछ घटित हो जाता। सुमन ने रेखा को किसी प्रकार शान्त किया।

लड़के आगे बैठे प्रौढ़ सज्जन को, जिन्होंने बीच-बचाव किया था, सफाई देने लगे—"आजकल लड़कियां खुद तो तितली बनकर मंडराती फिरती हैं, सुबह-शाम उनका फैशन बदलता रहता है···मगर लड़कों पर रिमार्क कसती हैं !"

दूसरे लड़के ने दलील दी—"हम पैंट पहनें या पायजामा, लड़कियां कौन होती हैं हमें 'इडियट' कहनेवाली। वे चुस्त कुरता व तंग मोहरी की सलवार पहनें या बिना बांह की छः इंच की ब्लाउज···उनके लिए सात खून माफ हैं। आजकल हर लड़की चलती-फिरती नुमाइश हैं, मगर फिर भी लड़कों को बदनाम करती हैं !···"

रेखा पछता रही थी, वह क्यों बस में बैठी। क्या इसीका नाम स्वच्छंदता है? जीवन की खुली धूप के मोह में क्या वह आग से खेल सकती है? एक क्षण को ऐसा लगा, जिस प्रयोग के लिए वह लखनऊ छोड़कर आई है, वह सफल न हो सकेगा। वह एक बड़े बाप की बेटी है। उसने केवल शासन ही किया है। वह भला मध्यम वर्ग की साधारण लड़कियों की तरह गन्दे कटाक्ष अपमानजनक उक्तियाँ कैसे बर्दाश्त कर सकती है। उसे लौट जाना चाहिए···अभी, इसी वक्त!!

इससे पहले कि वह बस रुकवाती, उसे याद आया···लखनऊ उजड़ चुका है। कमल-कल्पना का परिणय हो चुका होगा। वे दोनों हनीमून के लिए मसूरी गए होंगे।

आखिर कमल को उसने क्यों खो दिया?

'···मैंने उसपर सदा शासन किया। ···तुम्हें इस रंग का सूट पहनना चाहिए। सफेद कमीज पर इस कलर की टाई मैच नहीं करती। ·· तुम जूते में रोज ब्रश नहीं कराते। सर से तेल की बू आती है, ब्रिल्क्रीम लगाया करो। · तुम चाय सासर में डालकर पीते हो, यह गंदी आदत है। तुम पान बहुत खाते हो, यह मुझे अच्छा नहीं लगता।

'··· मैंने कभी उसकी पसन्द जानने की कोशिश न की। मैं अपने इशारे पर उसे सदा नचाती रही।

'और उस शाम?···

'मैंने आज इस्तीफा डायरेक्टर साहब को दे दिया है!'

'आखिर क्यों?'

'मुझसे गुलामी का बोझ नहीं उठाया जाता।'

रेखा के पांव तले से जमीन निकल गई। उसने कमल के गले में बाहें डालते हुए कहा—'डार्लिंग! आज मूड क्यों आफ है?'

कमल ने उसकी बाहें झटकते हुए कहा था—'तुमने मुझे भी क्या टाइगर समझा है! भूंकते टाइगर के गले में हाथ डालकर जिस तरह उसे प्यार से पुचकारकर डार्लिंग कहती हो····उसी तरह मुझे भी····!'

'तुम्हारा मतलब क्या है ?...' रेखा की त्यौरियां चढ़ गई।

'मेम साहब, मैं तुम्हारा पालतू कुत्ता नहीं, जो हमेशा तलुवे चाटता रहूँ। मेरी भी अपनी जिंदगी है, सपने हैं, इच्छाएँ हैं! तुमने कभी मेरे मन की बात जानने की भी कोशिश की! तुम्हें यह नहीं अच्छा लगता, वह नहीं लगता...मगर मेरी भी तो कुछ पसन्द है! मैं अब आजादी से खुले वातावरण में सांस लेना चाहता हूँ...मुझे माफ करो!...'

...बाहर जाते हुए कमल को उस दिन उसने रोका नहीं। बल्कि आवेश में चिल्ला पड़ी—'जाओ, जाओ, मैंने तुम्हें सोने के पिंजरे में कैद कर रखा था न! फुटपाथ पर सोनेवाले भी तो आजादी की सांस लिया करते हैं! ...मैंने तुमपर पानी की तरह पैसा बहाया, तुम्हारा कैरियर बनाया, तुम्हें सोसाइटी दी, पब्लिसिटी दी, आर्टिस्ट बनाया...और आज, तुम मुझीको आँखें दिखा रहे हो।...तुमसे अच्छा, ईमानदार और फेथफुल यह टाइगर है, जो खुला रहने पर भी घर से बाहर जाने की कभी नहीं सोचता। यह आजादी से ज्यादा प्यार की कीमत समझता है।...मैंने गलती की जो तुमसे प्यार किया, तुमपर भरोसा किया...!'

रेखा के उमड़ते आँसू भी कमल को न रोक सके।...

रेखा को सारी दुनिया से घृणा हो गई। दस-पन्द्रह दिन तक वह एकदम बाहर न निकली। कल दोपहर में निमंत्रण-पत्र पाकर, वह एक क्षण को संज्ञा-शून्य हो गई।...कमल से उसे ऐसी उम्मीद न थी।

वह उसके पास पांव पड़ने नहीं गई, उसने आत्महत्या की बात नहीं सोची। बस, एक ही विचार मन में उठा...लखनऊ से बाहर कहीं चली जाए। यहां रही तो उसका दम घुट जाएगा।

प्रमीला का उसी वक्त फोन भी आया—'यह कैसा स्कैण्डल है। कमल कल्पना से शादी कर रहा है। वे लोग हनीमून के लिए मसूरी जा रहे हैं। देहरादून के लिए दो बर्थ का रिजर्वेशन भी करा लिया है!...'

रेखा ने फोन पटका। जल्दी-जल्दी अटैची में साड़ियां, कोट वगैरह डाले। बिस्तर बांधने को कहकर बाथरूम में चली गई। मोटर में बैठकर

रेखा पछता रही थी, वह क्यों बस में बैठी। क्या इसीका नाम स्वच्छंदता है ? जीवन की खुली धूप के मोह में क्या वह आग से खेल सकती है ? एक क्षण को ऐसा लगा, जिस प्रयोग के लिए वह लखनऊ छोड़कर आई है, वह सफल न हो सकेगा। वह एक बड़े बाप की बेटी है। उसने केवल शासन ही किया है। वह भला मध्यम वर्ग की साधारण लड़कियों की तरह गन्दे कटाक्ष अपमानजनक उक्तियाँ कैसे बर्दाश्त कर सकती है। उसे लौट जाना चाहिए···अभी, इसी वक्त ! !

इससे पहले कि वह बस रुकवाती, उसे याद आया···लखनऊ उजड़ चुका है। कमल-कल्पना का परिणय हो चुका होगा। वे दोनों हनीमून के लिए मसूरी गए होंगे।

आखिर कमल को उसने क्यों खो दिया ?

'···मैंने उसपर सदा शासन किया। ···तुम्हें इस रंग का सूट पहनना चाहिए। सफेद कमीज पर इस कलर की टाई मैच नहीं करती। ·· तुम जूते में रोज ब्रश नहीं कराते। सर से तेल की बू आती है, ब्रिल्क्रीम लगाया करो। · तुम चाय सासर में डालकर पीते हो, यह गंदी आदत है। तुम पान वहुत खाते हो, यह मुझे अच्छा नहीं लगता।

'·· मैंने कभी उसकी पसन्द जानने की कोशिश न की। मैं अपने इशारे पर उसे सदा नचाती रही।

'और उस शाम ? ···

'मैंने आज इस्तीफा डायरेक्टर साहब को दे दिया है !'

'आखिर क्यों ?'

'मुझसे गुलामी का बोझ नहीं उठाया जाता।'

रेखा के पांव तले से जमीन निकल गई। उसने कमल के गले में बाहें डालते हुए कहा—'डार्लिंग ! आज मूड क्यों आफ है ?'

कमल ने उसकी बाहें झटकते हुए कहा था—'तुमने मुझे भी क्या टाइगर समझा है ! भूंकते टाइगर के गले में हाथ डालकर जिस तरह उसे प्यार से पुचकारकर डार्लिंग कहती हो''''उसी तरह मुझे भी''''!'

'तुम्हारा मतलब क्या है ?...' रेखा की त्यौरियां चढ़ गई।

'मेम साहब, मैं तुम्हारा पालतू कुत्ता नहीं, जो हमेशा तलुवे चाटता रहूँ। मेरी भी अपनी जिंदगी है, सपने हैं, इच्छाएं हैं! तुमने कभी मेरे मन की बात जानने की भी कोशिश की! तुम्हें यह नहीं अच्छा लगता, वह नहीं लगता...मगर मेरी भी तो कुछ पसन्द है! मैं अब आजादी से खुले वातावरण में सांस लेना चाहता हूँ...मुझे माफ करो!...'

...बाहर जाते हुए कमल को उस दिन उसने रोका नहीं। बल्कि आवेश में चिल्ला पड़ी—'जाओ, जाओ, मैंने तुम्हें सोने के पिंजरे में कैद कर रखा था न! फुटपाथ पर सोनेवाले भी तो आजादी की सांस लिया करते हैं! ...मैंने तुमपर पानी की तरह पैसा बहाया, तुम्हारा कैरियर बनाया, तुम्हें सोसाइटी दी, पब्लिसिटी दी, आर्टिस्ट बनाया...और आज, तुम मुझीको आँखें दिखा रहे हो।...तुमसे अच्छा, ईमानदार और फेथफुल यह टाइगर है, जो खुला रहने पर भी घर से बाहर जाने की कभी नहीं सोचता। यह आजादी से ज्यादा प्यार की कीमत समझता है।...मैंने गलती की जो तुमसे प्यार किया, तुमपर भरोसा किया... !'

रेखा के उमड़ते आँसू भी कमल को न रोक सके।...

रेखा को सारी दुनिया से घृणा हो गई। दस-पन्द्रह दिन तक वह एकदम बाहर न निकली। कल दोपहर में निमंत्रण-पत्र पाकर, वह एक क्षण को संज्ञा-शून्य हो गई।...कमल से उसे ऐसी उम्मीद न थी।

वह उसके पास पांव पड़ने नहीं गई, उसने आत्महत्या की बात नहीं सोची। बस, एक ही विचार मन में उठा...लखनऊ से बाहर कहीं चली जाए। यहां रही तो उसका दम घुट जाएगा।

प्रमीला का उसी वक्त फोन भी आया—'यह कैसा स्कैण्डल है। कमल कल्पना से शादी कर रहा है। वे लोग हनीमून के लिए मसूरी जा रहे हैं। देहरादून के लिए दो बर्थ का रिजर्वेशन भी करा लिया है!...'

रेखा ने फोन पटका। जल्दी-जल्दी अटैची में साड़ियाँ, कोट वगैरह डाले। बिस्तर बांधने को कहकर बाथरूम में चली गई। मोटर में बैठकर

स्टेशन चल दी। नैनीताल एक्सप्रेस छूटने में अभी पचीस मिनट बाकी थे।...

झटके से बस रुकी। रेखा की विचार-तन्द्रा टूटी। सुमन ने पूछा, "टोल-टैक्स क्या सब जगह लगता है ?"

"हां !" कहकर रेखा ने पर्स से पांच का नोट निकाला।

"रहने दो ! तुमने टिकट के भी पैसे दिए थे। मैं दे देती हूं।" सुमन बोली।

"नहीं, नहीं।" रेखा ने टोका, "बड़ी बहन के होते, छोटी को पैसे देना शोभा नहीं देता !..."

"अच्छा जी, अपने-आप बड़ी बहन बन बैठीं !" सुमन को विनोद सूझा, "आप मुझसे कितनी बड़ी हैं !"

"तुम्हारी उम्र क्या है ?"

"लड़कियों से उम्र नहीं पूछी जाती !" सुमन ने उत्तर दिया।

बस पहाड़ की ऊँची चढ़ाइयों पर चढ़ने लगी। सूरज बादलों के पीछे छिप गया था। मौसम अत्यन्त सुहावना हो गया था। पहाड़ की ढलान पर भी ऊँचे-ऊँचे हरे वृक्ष सीधे तने खड़े थे। उनकी ऊंचाई व सफेद तने को गौर से देखती सुमन ने पूछा—'क्या नाम है इनका ?' आंधी-पानी झेलते भी यह इसी प्रकार सीधे तने खड़े रहते हैं। काश !...जीवन में मनुष्य भी ऐसे तना खड़ा रह सकता।"

अन्तिम बात रेखा के अन्तर में कील की तरह चुभ गई। उसे नई रोशनी मिली। वह कमल को हमेशा-हमेशा के लिए भुला देगी। वह भी इन वृक्षों की तरह आंधी-पानी से जूझेगी, मगर घुटने न टेकेगी।...

सुमन ने पुनः पूछा—"क्या नाम है इनका !"

"क्या बिना नाम जाने हम इनकी प्रशंसा नहीं कर सकते !... मेरे लिए तो ये वृक्ष एक प्रतीक-मात्र हैं !...इनका नाम जानने की कभी मैंने कोशिश न की।" रेखा ने उत्तर दिया।

"सोचती हूँ, मनुष्य कितना महान है। पहाड़ों के सीने को चीर जिन हाथों ने यह सड़क बनाई, उन चोटियों पर मकान बनाए वह क्या कुछ नहीं कर सकता !" सुमन ने जिज्ञासा की।

"हां, मनुष्य ताज बना सकता है, अजन्ता-एलोरा के भित्ति-चित्र बना सकता है, कुतुब जैसी ऊंची मीनार बना सकता है···बादलों से ऊपर पंख बांधकर उड़ सकता है, हवाई जहाज़ और स्पुतनिक बना सकता है, चन्द्रमा को राकेट छोड़ सकता है मगर फिर भी कितना छोटा है वह !" रेखा एक उच्छ्वास में इतना सब कह गई।

"तुम्हारा मतलब ?"

"वह आज भी प्यार के छोटे-छोटे ताजमहल बनाकर तोड़ देता है, गुलाब के फूल उगा और खिलाकर खुद ही पाँव से रौंद देता है···यही नहीं, वह टूटे दिलों के टुकड़े जोड़ नहीं सकता, फिर भी जीता है। रोना चाहता है, मगर आँखों की सीपी से एक बूंद मोती नहीं टपकता। कितना अभागा है वह, जो जीता तो है, मगर यह भी नहीं जानता, उसकी मंज़िल क्या है ? आखिर वह किसके लिए जीना चाहता है ? उसे जीवन से इतना मोह क्यों ?"

सुमन ने पहली बार अनुभव किया कि जिसे वह संगमरमर की मूरत समझे बैठी थी, वह भी एक साधारण लड़की की तरह प्यार कर सकती है, प्यार के दर्द को महसूस कर सकती है, और अपनी बात को इतने प्रभावपूर्ण ढंग से व्यक्त कर सकती है। उसके मुंह से ठंडी सांस के साथ इतना ही निकला—"कितना लाचार है वह !···"

नैनीताल का बस-स्टैण्ड आ गया। बसों की भीड़ जमा थी। बस रुकते ही मक्खियों की तरह कुलियों की फौज आ पहुँची। चूटों की तरह वे यात्रियों से चिपकने लगे। कुछ कुलियों ने अपने नम्बर अन्दर फेंक दिए।

सुमन के लिए यह वातावरण एकदम नया था। वह भी रेखा के साथ नीचे उतरी। कुली ने सामान उतारा।

होटल के एजेंट पीछे लग गए । सुमन ने एक एजेंट से कमरे का रेट पूछा—"तीस रुपये रोज़, लाजिंग-बोर्डिंग साथ !"

सुमन को लगा, उसका सारा बजट फेल हो जाएगा । कितने वर्षों से योजना बना रही थी । मगर तीन सौ रुपये ही एकत्र न होते । जब रुपये एकत्र हो गए तो मां अकेले भेजने को तैयार न होती । कितनी मुश्किल से इस बार वह मां को मना पाई थी । दफ्तर से एक महीने की छुट्टी भी ले ली थी ।

लखनऊ में जब थर्ड क्लास के किसी डिब्बे में घुसने क्या, पांव धरने की भी जगह न मिली··· तो लाचार होकर, उसे सेकेण्ड का टिकट बनवाना पड़ा । उसका बजट वहीं से फेल होना शुरू हो गया था । उसे लगा, नैनीताल दस दिन से ज्यादा वह न रुक सकेगी । आखिर, वापस लौटकर भी तो कानपुर जाना है ।

इस कल्पना-मात्र से वह सिहर उठी कि नैनीताल आकर भी वह रानीखेत, अल्मोड़ा, भुवाली वगैरह न घूम पाएगी !···

रेखा ने कुली को आदेश दिया—"मल्लीताल चलो, हम बोट से आ रहे हैं !"

कुली सामान लेकर चल पड़े । सुमन ने चिन्ता व्यक्त की—"कहीं वे सामान के साथ नौ दो ग्यारह हो गए ?"

रेखा उसका हाथ पकड़कर आगे बढ़ती हुई ज़ोर से खिल-खिला पड़ी—'क्या हुआ, फिर बाज़ार से कपड़े ख़रीद लेंगे ?"

"मगर उसमें तो मेरे सारे रुपये भी पड़े हैं ?"

"कितने हैं !"

सुमन लजा गई । नाव में बैठते हुए रेखा बोली—"यह रहा कुलियों का नम्बर । पहाड़ों पर अभी मैदानों जैसी धांधली नहीं होती । तुम्हारा सामान सुरक्षित वहां पहुँच जाएगा !"

नाव चली। पहाड़ों की गोद में झील के मध्य सफेद पाल की बगुले-सी अनेक किश्तियाँ इधर-उधर डोल रही थीं। पानी का रंग गाढ़ा नीला था। चारों ओर का बड़ा सुहावना दृश्य था। दूसरी ओर गुरुद्वारे का शिखर चमक रहा था। दाहिनी तरफ सड़क पर रिक्शे दौड़ रहे थे, बाजार के बीच अनेक होटलों के साइनबोर्ड चमक रहे थे। मगर इस वक्त सुमन को कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा था।

उसे यही चिन्ता सता रही थी, कहां ठहरा जाए। अगर रेखा न मिलती तो शायद वह इधर-उधर किसी धर्मशाला का पता लगाती।

रेखा ने पूछा, "कहाँ ठहरने का विचार है?"

"कोई सस्ता होटल यहाँ नहीं है क्या?" सुमन ने डरते-डरते पूछा।

रेखा जिन होटलों को जानती थी या जहाँ ठहर चुकी थी, वहाँ चालीस-पचास रुपये रोज से कम का कोई कमरा नहीं था। मगर मध्यम-वर्ग की साधारण लड़कियाँ उन होटलों में नहीं ठहरतीं।

नाव चलानेवाला बोला—"आजकल यहाँ बीस-पचीस रुपये से कम का कोई कमरा नहीं मिलेगा। यही तो सीजन कमाने का है। साल-भर तक लोग मक्खी मारते हैं।..."

रेखा को विनोद सूझा—"पाँच रुपये रोज का कोई होटल बताओ।"

सुमन ने सन्तोष की सांस ली।

नाव वाले ने नाक चढ़ाते हुए कहा—"मेम साहब, पाँचवाले ही तो आजकल पन्द्रह-बीस ले रहे हैं।"

रेखा हंस पड़ी—"तब तो हम यहां नहीं रह सकते। आज ही वापस लौट जाना पड़ेगा।"

तभी नाव किनारे लगी। नीचे उतरते हुए सुमन ने पूछा—"कितने पैसे हुए?"

"सिर्फ आठ आने, हजूर!"

सुमन ने झट अठन्नी आगे बढ़ा दी। इस बार रेखा कुछ नहीं बोली।

मल्लीताल की चहल-पहल, खुला मैदान देखकर सुमन चकित हो गई। पहाड़ के बीच भी इतना बड़ा मैदान बना लिया।

रेखा ने सुमन से कहा—"तुम यहाँ रुको, मैं अभी किसी सस्ते होटल का पता लगाती हूं।"

"मगर कुली किधर गए?"

रेखा ने हाथ के इशारे बताया—"वह देखो, पेड़ के नीचे बैठे बीड़ी के कश ले रहे हैं।"

रेखा के चले जाने पर सुमन सामने के मैदान की ओर देखने लगी। लड़कियाँ ब्रीचेज कसे घोड़े दौड़ा रही थीं। धूप उजली हो गई थी।

कुछ देर बाद रेखा हंसते हुए लौटी। कुलियों से ग्रैंड होटल चलने को कहा।

सुमन ने चलते हुए प्रश्न किया—"कितने रुपये का कमरा मिला!"

"बहुत सस्ता!"

"फिर भी! आखिर कितना।"

रेखा ने मुस्कराते हुए कहा—"बस पन्द्रह रुपये रोज। खाना-पीना भी साथ मुफ्त!"

सुमन को विश्वास न हुआ। होटल पहुँचकर उसका संदेह और पुष्ट हो गया। इतना बढ़िया, सजा-सजाया कमरा, भला पन्द्रह रुपये रोज में कैसे मिल सकता है।

मगर पुनः पूछने की हिम्मत न पड़ी। कहीं रेखा बुरा न मान जाए।

३

सुमन ने रेखा के साथ जी भर कर नैनीताल की सैर की। रेखा ने उसे स्केटिंग सिखाई। नाव चलाना ही नहीं, घुड़सवारी की भी ट्रेनिंग दी।

माल रोड के चक्कर लगाते सुमन ऊब गई। आखिर नैनीताल में घूमने की कुछ गिनी-चुनी ही तो जगहें हैं। बार-बार उन्हीं स्थानों के इर्द-गिर्द चक्कर लगाने का मतलब उसकी समझ में नहीं आता। रेखा का साथ न होता तो शायद दो दिन में ही वह भाग खड़ी होती।

रात जोर की बारिश हुई थी। सुबह से ठंडी हवा चल रही थी। रूम-हीटर की वजह से कमरा गर्म था। बाहर निकलने की हिम्मत ही नहीं पड़ रही थी। चाय पीकर रेखा सुबह का अखबार पढ़ने लगी।

सुमन ने व्यंग कसा - "अखबार की लत भी अजीब होती है। खाना मिले या न मिले, अखबार जरूर पढ़ने को वक्त से मिल जाना चाहिए। रोज की खबरें बदलती रहती हैं। अमेरिका ने शुक्रग्रह को राकेट छोड़ा या रूस ने भूमिगत परमाणु-परीक्षण किया इससे हमारा क्या बनता-बिगड़ता है। बेकार सर खपाने से फायदा? मैं तो केवल हेडलाइन देखकर ही अखबार रख देती हूँ।"

रेखा शायद किसी नई फिल्म की समीक्षा पढ़ने में तल्लीन थी। उसे बात करने की फुर्सत न थी, केवल धीरे से मुस्करा दी।

सुमन ने भी अपनी डायरी उठाई और लिखना शुरू किया!

'क्या मनुष्य को हृदय देना आवश्यक था। मात्र बुद्धि ही उसके लिए पर्याप्त न थी क्या?...'

'रेखा मेरे प्रति इतनी सहृदय क्यों है? एक अनजानी-अपरिचित लड़की पर इस प्रकार मुक्त हाथ से रुपये लुटाना क्या बुद्धि-संगत माना जा सकता है? लगता है बुद्धि न देकर विधाता ने इस लड़की को केवल हृदय ही दिया है। परन्तु हृदयहीन होना ही क्या बुद्धिमान का एकमात्र लक्षण है?'

'...मन भी अजीब होता है, जिधर चाहता है बहक जाता है। आज, हाथों में हाथ डाले, एक-दूसरे से सटते, खिलखिलाते जोड़ों को देखकर... उसका मन क्यों उड़ने लगा?... उस लम्बी लड़की की जगह

अगर वह होती, उसके हाथों में वैसे ही लाल चूड़े पड़े होते, उसकी मेंहदी रंजित हथेलियां अगर उन हाथों के बीच जकड़ी होतीं···चलते वक्त वैसा ही स्पर्श-सुख अगर वह प्राप्त कर सकती···तो सचमुच वह कितनी सौभाग्यशालिनी होती ! नैनीताल की शामें कितनी रंगीन बन जातीं, और ठंडी सुबहें कितनी मीठी लगतीं !···

'मगर इस देश में कुंवारी कन्याएं सौभाग्यवती नहीं होतीं।···मांग में सिन्दूर के बिना क्या सौभाग्य नहीं प्राप्त किया जा सकता ?···'

कलम रुक गई। वह स्वप्नलोक में खो गई।

'नैनीताल रवाना होने से पूर्व कितनी रंगीन कल्पनाएं थीं। एक नौजवान अपरिचित सहयात्री···परिचय घनिष्ठता में परिणत होगा। रोज पहाड़ों की तन्हाई में मुलाकातें, वायदे और इन्तजार की बेचैनी ?···'

'जैसा हम सोचते हैं, जिन्दगी क्यों नहीं वैसी बनती ?···सपने क्यों अधूरे रह जाते हैं ?'

यह प्रश्न बार-बार उसके मन को उद्वेलित किए डाल रहा था।···

रेखा ने अखबार टेबुल पर रख एक मीठी जम्हाई ली।

"हैलो फिलासफर, किस दुनिया में खोई हुई हो ?"

सुमन की तन्द्रा भंग हुई, ठंडी सांस लेती बोली—"सोचने से ही तो दुनिया नहीं बदल जाती ! काश ! अगर ऐसा ही हो पाता।"

रेखा ने पर्दा हटाया, जरा-सा किवाड़ खोला, बादल का एक टुकड़ा कमरे में समा गया। बाहर चारों ओर बादल ही बादल थे। पहाड़ों की चोटियों पर, पेड़ों की हरी डालियों पर, मकानों की छतों पर बादल तैर रहे थे। बादलों के बीच जैसे सारा नैनीताल डूब गया हो।

"इन बादलों को ही देखो ? जाने कब पानी बनकर बरस पड़ेंगे···।" रेखा बोलते-बोलते रुक गई।

सुमन ने विषय बदला—"मैं नैनीताल से ऊब गई।"

"नैनीताल से या मुझसे ?" उसके पास बैठते रेखा ने प्रश्न किया।

"सच पूछो तो अपने-आप से ही ।"

"आखिर क्यों ?" रेखा की दिलचस्पी बढ़ी ।

"क्या नारी सचमुच अधूरी है ? बिना पुरुष के उसके जीवन का कोई अर्थ नहीं… ?" सुमन ने दांत से जीभ काट ली ।

"चुप क्यों हो गईं ?"

सुमन को लगा जैसे वह रेखा के समक्ष वस्त्रहीन हो गई हो । अपनी दुर्बलता पर उसे मन ही मन पश्चात्ताप हुआ । पिछले कई दिनों से इसी प्रकार के अनेक विचार उसके अन्दर उमड़-घुमड़ कर दिल और दिमाग को मथे डाल रहे थे । नारी-पुरुष के सम्बन्ध में वह बहुधा इधर-उधर पुस्तकों में पढ़ा करती थी । मगर आज जीवन में पहली बार पुरुष का अभाव उसने इतनी तीव्रता से अनुभव किया ।

रेखा ने सुमन को चुप देखकर कहा—"कल भुवाली चलेंगे ।"

"मैं रानी खेत जाने की सोच रही हूँ ।"

"वहाँ भी चलेंगे । पहले इधर घूम लिया जाए ।" रेखा ने आश्वासन दिया ।

"मगर मैं साथ न दे सकूँगी ।" सुमन ने धीरे से कहा ।

"कोई दूसरा साथी मिल गया है क्या ?"

"मिला तो नहीं, तलाश जरूर है ।' सुमन ने साहस किया ।

रेखा खिलखिला कर हंस पड़ी । "तुम अच्छा मज़ाक कर लेती हो ।"

सुमन ने गम्भीरता से कहा—"मजाक नहीं, सच कहती हूँ । मैं कल जा रही हूँ ।"

रेखा को एक तेज शाक लगा । उसे लगा, दुनिया में कुछ भी विश्वसनीय नहीं । जिसकी ओर उसने स्नेह से हाथ बढ़ाया, उसी ने उसे धोखा दिया ।…

मुंह से अनायास निकला—"अगर मजाक न समझो, तो इसी वक़्त जा सकती हो ।"

रेखा पांव में स्लीपर डाले ही कमरे से बाहर निकल गई। उसने पीछे मुड़कर भी एक बार न देखा। लॉन्ज में जाकर एक खाली सोफे पर वह बैठ गई। बाहर बरामदे में दो छोकरियां चुस्त पैंट कसे टेबुल-टेनिस खेल रही थीं।

···काफी उसे बहुत ज्यादा कड़ुवी लगी। उसका गला ही नही, दिल-दिमाग बुरी तरह जल रहा था। 'दीपा ठीक कहती थी, आदमी के संस्कार नहीं जाते। दो टके का कमल हो या ढाई-सौ पानेवाली स्टेनो सुमन···सब धोखेबाज हैं, बेईमान, विश्वासघाती!! गरीब मुहब्बत के लिए नहीं, नफरत के लिए बने हैं।

'···मैं भी कितनी सिली हूँ। एक ठोकर खाकर भी आंख न खुली। आई हेट कमल; मैं सुमन का मुंह भी नहीं देखूंगी। शी इज फ्लर्ट··। उसे आदमी चाहिए···आदमी।

'मेरे पास दौलत है, मैं आदमी खरीद सकती हूँ। आई विल परचेज···देम··।

"बेरा।" वह चीख पड़ी।

"यस, मिस साहब!"

"तुम गधा है।"

"यस प्लीज।"

रेखा उठकर खड़ी हो गई। लॉन्ज में बैठे सब सभ्य पुरुष कौतूहल से रेखा को घूरने लगे।

रेखा सीधे कमरे में गई। सुमन जा चुकी थी। एक लिफाफा छोड़ गई थी। रेखा ने उसे फाड़कर फेंक दिया।

बेल का बटन हाथ से दबाया और तब तक हाथ से दबाए रखा, जब तक हाँफता हुआ बेयरा अन्दर न आ गया।

"व्हिस्की-सोडा लाओ!" रेखा चिल्लाई।

बेयरा भागा। उसे लगा कि मेम साहब पर जैसे आज पागलपन का भूत सवार हो गया है।

रेखा स्वयं नहीं जानती थी कि उसे आज क्या हो गया है। अन्दर एक आग सुलग रही थी, प्रतिहिंसा की। वह बदला लेना चाहती थी, उन सबसे जिन लोगों ने उसके अस्तित्व की सतत उपेक्षा की।...

धीरे-धीरे आधी बोतल खाली कर दी। इसके पहले भी उसने पार्टियों में दो-चार पेग पिए थे, मगर आज तो बात ही कुछ और थी।....

वह औंधे मुंह सोफे पर लुढ़क गई।...उसे कुछ होश न रहा।

सुमन के लिए सब कुछ अप्रत्याशित रूप से घटा। उसे रेखा से इस प्रकार के दुर्व्यवहार की आशा न थी। बात कहां से कहाँ जा पहुँची।

सामान लेकर वह सीधे वह सीधे रोडबेज बस-स्टेशन पर पहुँची। भुवाली जाने वाली बस छूटनेवाली थी। टिकट लेकर वह उसमें बैठ गई।

बस चली। उसने राहत की सांस ली। उसे लगा, उसकी यात्रा अब शुरू हो रही है। रेखा का साहचर्य एक मोहक सपना था, जो नींद के साथ ही टूट चुका था।

बस पहाड़ी ढलान पर तेजी से फिसल रही थी। बादलों के बीच उसे ऐसा लगा जैसे बस एक बड़ी नाव है जो बादलों की लहरों पर हिचकोले खाती तैर रही है। वह भी एक नये स्वप्नलोक में उड़ी चली जा रही थी।

कहीं पढ़ी हुई एक पंक्ति बार-बार दिमाग में चुभ रही थी—'पुरुष ने अपने लिए वेश्यालय बना लिए, मगर कुलीन नारियाँ क्या करें ?...'

उसकी आँखों के आगे अपनी पड़ोसन नीना का करुण चित्र लहर गया। मांग में सिन्दूर डालने से ही थोड़े सबको सौभाग्य मिल जाता है ? नीना के पीड़ा-भरे शब्द—'मुझसे तुम क्वाँरी ही भली ! यहाँ अपना दु:ख सुननेवाला कौन है ? माता-पिता ने हाथ पीले कर बोझा उतारा।

उन्हें यह जानने की भला जरूरत क्या, उनकी बेटी को पति नहीं, पति नामधारी बस एक ठंडी लाश ही मिली है। जीवन-भर गीली लकड़ी की तरह मैं अन्दर-अन्दर सुलगा करूँ, किसीका क्या ? धुआँ देखकर ही लोग आग की कल्पना कर लेते हैं।··· अग्नि की साक्षी देकर जिसे वरा है, वह जब तक अपने हाथों मेरे मुँह में आग न डाल दे, मुक्ति कैसे मिल सकती है ? सिन्दूर के साथ पतिव्रत-धर्म की भी तो लाज रखनी पड़ेगी।'

बस एक मोड़ पर तेज झटके के साथ रुकी। कण्डक्टर ने आवाज लगाई—सैनिटोरियम।

सुमन को एक जोरदार आघात लगा। बाईं ओर सैनिटोरियम का बड़ा बोर्ड देखकर उसे लगा, नीना जैसी अभागिन पतिव्रता नारियां चिता की सेज पर लेटने से पहले अक्सर इन्हीं सैनिटोरियमों में इलाज के लिए भेजी जाती हैं।

शायद इसीलिए, कहीं यक्ष्मा के कीटाणु पति-देवता को न खा जाए !

भुवाली पास आ गया था। बस तेजी से ढलान पर फिसलती चली जा रही थी।

४

दो-तीन दिन रेखा कमरे से बाहर न निकाली।

आज उसे अपने डैडी की याद आई। जिनकी दौलत के सहारे वह ऐश कर रही है, उनके प्रति अकृतज्ञ होना ठीक नहीं। उसने अपने डैडी को पत्र लिखा—

"··· मैं नैनीताल में हूँ। जल्दी में आपको सूचित न कर सकी, इसका दुःख है।

"डैडी, मुझे कभी-कभी ऐसा लगता है कि दौलत से सारी खुशियां नहीं खरीदी जा सकतीं।···मैंने एक मध्यम वर्ग की साधारण लड़की से

बहनापा जोड़ना चाहा, उस जैसी जिंदगी बितानी चाही''' मगर वह भी स्वार्थी निकली ! मेरा अब गरीबों पर से विश्वास उठ गया है।

"मुझे लगता है, जार के घेरे में चक्कर लगानेवाली मछलियां तालाब, नदी या समुद्र में डाल दी जाए, मगर उनका वृत्त नहीं बढ़ता। गलती मेरी थी, मेरा प्रयोग असफल हुआ। मैं अपनी हार स्वीकार करती हूँ।

"कमल के बारे में भी आपकी दी हुई चेतावनियों की मैंने उपेक्षा की।''''मानती हूँ, आपकी जीवन-दृष्टि मुझसे ज्यादा प्रौढ़ व स्पष्ट है।

"'''मेरे अच्छे डैडी, मैं जीवन का अन्तिम प्रयोग करना चाहती हूँ। मैंने आज तक जिस कल्चर्ड हाई सोसाइटी की उपेक्षा की, उसे मैं निकट से देखना-परखना चाहती हूँ। आशा है, मेरे इस इरादे से आपको प्रसन्नता ही होगी।

"मुझे रुपयों की जरूरत है। आप ड्राइवर श्यामसिंह और आया मेरी को मेरी पर्सनल कैडिलाक के साथ भेज दीजिए।'' पहाड़ी चढ़ाइयों पर अगर 'फोर्ड' ठीक समझें तो फिर उसे ही भेज दीजिए। बैंक ड्राफ्ट भी जल्दी भेज दीजिएगा।'''"

डैडी को पत्र लिखने के बाद रेखा को लगा—एक बड़ा बोझ जैसे उतर गया।

फ्रेश होकर उसने कपड़े बदले। मेक-अप किया। सेंट से कमरा महक गया।

शीशे के आगे खड़े होकर हर ऐंगिल से अपना निरीक्षण किया। फिर पर्स हाथ में लेकर बाहर निकली।

आज रेखा एकदम बदली हुई थी। उसकी चाल, दृष्टि, आवाज''''सब कुछ बदल चुका था। दूर से ही लगता, कोई अप्सरा चली आ रही है।

कैपिटल में अंग्रेजी पिक्चर लगी थी। रेखा ने बॉलकनी का टिकट लिया।

हाल में अन्धेरा हो चुका था। रेखा एक खाली सोफे पर बैठ गई।

परदे पर चलनेवाली कार्टून-फिल्म को देखते हुए उसने धीरे से अपनी बांह सोफे के ऊपर फैलाई। मगर सोफे की बांह पर एक हाथ पहले से ही किसीका बिछा हुआ था। स्पर्श से ही वह समझ गई, हाथ पुरुष का था। उसने अपना हाथ पीछे खींचकर धीरे से कहा – 'सॉरी !''

इण्टरवल हुआ।

रेखा के बगल में सोफे पर एक नवयुवक बैठा था। वेश-भूषा से ही वह किसी उच्चकुल का लग रहा था। वह इतमीनान से कोई कीमती सिगरेट फूंक रहा था। सिगरेट का धुआं भी सुगन्धित था। धुएं से ही उसने अन्दाज लगा लिया जरूर कोई इम्पोर्टेण्ट सिगरेट है।

नवयुवक दो-एक पल रेखा को गौर से देखता रहा। उसे यह समझने में देर न लगी कि यह लड़की भी किसी बड़े बाप की बेटी है। मोतियों के हार को घूरता वह सोचता रहा, मोती उजले हैं या वह श्वेत गर्दन, जिसके ऊपर हार चमक रहा है। उसने दो क्रीम-काफी का आर्डर दिया।

बेतकल्लुफी से रेखा की तरफ खिसकता बोला "आई एम रमेश···! मैं दस दिन पहले ही न्यूयार्क से वापस आया हूँ। दिल्ली की गर्मी मुझसे टालरेट नहीं हुई, इसलिए यहां चला आया !···"

बोलते-बोलते वह रुक गया। रेखा सभ्यतावश मुस्करा-भर दी।

काफी आई। उसने एक प्याला रेखा की ओर बढ़ाया। रेखा को बोलना पड़ा –"नो, थैंक्यू !"

रमेश लड़कियों के स्वभाव से परिचित था। बोला –"नो·· नो, आपको लेना पड़ेगा। अगर मुफ्त की काफी हजम न होती हो तो आप ही बिल दे दीजिएगा। आप न पीना चाहें, लेकिन हम तो आपकी काफी हजम कर सकते हैं।"

रेखा को आदमी दिलचस्प लगा। उसने प्याला लिया – "थैंक्यू !"

"व्हाई थैंक्स !" रमेश बोला –"जब आप पेमेंट कर रही हैं तो मुझे थैंक्स कहना चाहिए !"

"आप मजाक अच्छा कर लेते हैं !" रेखा ने कटाक्ष किया।

"मजाक तो अमेरिका में मैंने सीखा !" काफी सिप करते वह बोला—"वहां लड़कियां खूब लोगों को बेवकूफ बनाती हैं।"

रेखा ने बात काटी—"हिन्दुस्तान में तो लड़के ही बस लड़कियों को बेवकूफ बनाना जानते हैं !"

दोनों की सम्मिलित हंसी के साथ ही हॉल की बत्तियां भी गुल हो गईं।

पिक्चर हाल से बाहर निकलते हुए रमेश बोला—"मैंने तीसरी बार आज इस पिक्चर को देखा।"

रेखा ने पुनः व्यंग किया—"आखिरी बार, शायद आपने न्यूयार्क में इसे देखा होगा !"

"करेक्ट !" रमेश अन्दर से कट गया। झेंप मिटाने के लिए बोला—"आप काफी समझदार लगती हैं !"

"लगता है काफी का असर नहीं गया !"

रमेश ने इतने जोर का ठहाका लगाया कि सिनेमा हाल से बाहर निकलनेवाले सभी लोग चौंककर उधर देखने लगे।

फिर साथ-साथ चलते हुए रमेश ने धीरे से पूछा—"आपके साथ····मेरा मतलब आप यहां अकेली ही हैं !"

"आप जो साथ हैं !" रेखा ने सुराहीदार गर्दन घुमाकर कहा।

रमेश ने प्रसन्नता से अपने हाथ की उंगलियां एक-दूसरे में फंसाते हुए कहा—"मैं भी यहां बिना कम्पनी के बोर हो रहा था···!"

रेखा ने पुनः छींटा कसा—"क्यों ? लौटते समय अमेरिका से किसी गर्ल-फ्रेण्ड को भी साथ ही इम्पोर्ट कर लाते।"

इस बार रमेश नहीं चूका—"फिर आप जैसी हसीना को कम्पनी कौन देता !"

रेखा के गाल शर्म से लाल हो गये ।

रमेश ने टापिक बदला—"चलिए कुछ देर बोटिंग ही की जाए !"

रेखा चाहकर भी टाल न सकी । उसके व्यक्तित्व में ही कुछ ऐसा जादू था, न चाहते हुए भी रेखा उसकी ओर खिची जा रही थी ।

नाव में बैठते हुए रमेश ने पूछा—"अपने बारे में तो मैं इतना कुछ बक गया, मगर आपकी तारीफ तो सुनी नहीं !"

रेखा एक स्वप्नलोक में खो चली थी । आज पहली बार उसे झील इतनी सुन्दर लगी और शाम रंगीन लगी । याद आया, सुमन ठीक ही कहती थी, पुरुष बिना नारी अधूरी है !

रमेश ने उसे चुप देखकर पूछा—"किस नाम से आपको पुकारा करूं !"

"अगर मेरे करीब बैठकर भी नाम से पुकारना जरूरी हो तो रेखा कह सकते हैं !"

"रेखा !" रमेश बोला—"कितना प्यारा, छोटा-सा नाम है, रेखा !"

रेखा ने फिर व्यंग किया—"स्कूल के फार्म की तरह, आपके दिमाग के रजिस्टर में अपना पूरा परिचय लिखाना तो शेष है । पिता का नाम, जाति, पेशा, उम्र, घर का पता...और भी जो-जो पूछना हो पूछ लीजिए । अगर कल लापता हो जाऊँ तो कहाँ ढूंढ़िएगा ।"

रमेश ने धीरे से उसका हाथ दबाया । नाव चलानेवाले ने शर्माकर गर्दन घुमा ली ।

शाम घनी हो चुकी थी । चारों ओर बिजली के बल्ब चमक रहे थे । मल्लीताल आ गया था । किनारे पर नाव रुकी ।

इतनी जल्दी किनारा आ गया । रेखा को बुरा लगा । उसने आदेश दिया—"वापस मल्लीताल चलो !"

नाव फिर पानी पर तैरने लगी । रेखा को आज व्हिस्की से ज्यादा नशा हो रहा था । उसकी हथेलियाँ अभी तक गर्म थीं ।

रमेश न्यूयार्क व वाशिंगटन की डींगें मार रहा था—"एकबार मैं ड्रामा देखने गया। कुछ देर से पहुँचा था। हाल फुल हो चुका था। मैं निराश वापस लौट रहा था कि एक लड़की ने आवाज दी। मैं रुक गया। लड़की के पास दो टिकट थे। वह अपने किसी ब्वाय-फ्रेण्ड का इन्तजार कर रही थी। मगर वह तब तक नहीं आया था। उसने मुझसे प्रार्थना की, क्या मैं उसे अपनी कम्पनी ड्रामा देखने के लिए दे सकता हूँ ?''''इतनी फारवर्ड वहां लड़कियाँ होती हैं !"

"अगर उसका ब्वाय-फ्रेंड आपको उसके साथ हाल से निकलते देख लेता ?" रेखा ने जिज्ञासा की।

"तो क्या होता ?" रमेश बोला—"वहाँ लोग नैरो माइन्डेड नहीं होते। पिता अपनी पुत्री को ब्वाय-फ्रेण्ड के साथ घूमते देखकर त्यौरियाँ नहीं चढ़ाता, बल्कि चीयर अप करता है, दोनों को विश करता है।"

''''कमबख्त मल्लीताल भी आ पहुँचा। उतरना ही पड़ा।

कुछ देर इधर-उधर चक्कर लगाकर फिर वहीं दूसरे दिन मिलने का वचन ले-देकर दोनों एक-दूसरे से विदा हो गए।

५

तिवारी होटल में तीन रुपये रोज का कमरा प्राप्त कर सुमन बड़ी प्रसन्न हुई। होटल छोटा था तो क्या, दिन-भर वह कमरे में थोड़े ही नजरबन्द रहेगी। दस-पाँच दिन यहाँ मजे से काटे जा सकते थे।

कमरे में ताला बन्द कर वह बाहर निकली। एक सस्ते से रेस्ट्रां में चाय पी। शाम के पाँच बज रहे थे।

आठ आने सेर खुमानी बिक रही थी। खुमानियों से चेस्टर की दोनों जेबें भरकर वह चल पड़ी। एक दोराहे पर आकर वह रुक गई। एक सड़क भीमताल को जाती थी, दूसरी रामगढ़ मुक्तेश्वर की ओर।

उसने बाईं ओर की एक पगडण्डी पकड़ी। सीढ़ीदार पगडंडियों के सहारे वह पहाड़ की चोटी पर अकेले चढ़ने लगी। काफी ऊँचाई पर

पहुँचकर उसने चैन की सांस ली। सांस अभी तक फूल रही थी। उसने चेस्टर उतारा। उसे गर्मी लग रही थी।

भुवाली बहुत नीचे छूट गया था। घरौंदे जैसे मकानों के टूटे काले खपरैल चमक रहे थे। बच्चों के खिलौनों की तरह छोटी-छोटी बसें नीचे रेंग रही थीं। उस ऊँचाई से आदमी भी कितने बौने नजर आ रहे थे। पीठ पर मनों बोझा उठाए, झुके हुए, फटे चिथड़ों में लिपटे पहाड़ी कुली ऊपर से एकदम खच्चर की तरह नजर आ रहे थे।

चारों ओर जिधर दृष्टि जाती, सब कुछ सुन्दर व मनोरम था। घास पर सुमन बैठ गई। बैठे-बैठे वह न जाने क्या-क्या सोच गई।...'अगर यहाँ से मेरा पांव फिसल जाए और मैं नीचे गिरकर मर जाऊं तो?.... मां को पता ही न चल पाएगा, वह सारी ज़िन्दगी मेरे लौटने की प्रतीक्षा ही करती रह जाएगी।

'अगर कोई डाकू आकर मुझे गठरी की तरह बांहों में भरकर उठा ले जाए तो?'...वह उठ खड़ी हुई। आसपास कोई नहीं था। उसको कुछ राहत मिली।

जेब में पड़ी खुमानियों की याद आई। उसने खाना शुरू किया। पथरीले पहाड़ों के सीने पर भी घास उगती है, वृक्ष फूलते हैं, फूल खिलते हैं और मीठे फल निकलते हैं।

खुमानी खाकर उसने बीच की गिटक नीचे उछाल दी। तभी ख्याल आया, उस गिटक के अन्दर भी मीठा बादाम होता है।...दूसरी खुमानी खाकर उसने गिटक पास रख ली। सोचा, 'पहले सब रख लूं, बाद को बादाम तोड़कर निकालूंगी!'

....रेखा की याद आई। '...घमंडी कहीं की!....न जाने अपने-आप को क्या समझती है?...दौलत का इतना अभिमान।...'

उसकी स्मृति से क्रोधित सुमन तीन-चार खुमानी की गिटकें रखना भूलकर नीचे फेंक गई।

संगमरमर चाहे कितना भी कीमती हो, दूर से ही अच्छा लगता है। उससे ताजमहल भले ही बन जाए, उसमें कुछ उगता नहीं, पनपता और फलता नहीं।...उससे यह मिट्टी व पत्थरों के काले पहाड़ ही भले, जिसमें सब कुछ उगता है।...गेहूँ ही नहीं, गुलाब भी फूलता है।

सोचते-सोचते सूरज भी ढल चला। बहुत सारी गिटकें एकत्र हो गई थीं। सुमन उठी, पत्थर ढूंढ़ने! ढूंढ़ते-ढूंढ़ते वह पगडण्डी के सहारे एक सीढ़ी और ऊपर चढ़ गई।

दूसरी ओर फिर ढलान शुरू हो जाती थी। सीढ़ीदार खेतों पर हरे पौधे मुस्करा रहे थे।

गिटक तोड़ने के लिए एक बड़ा पत्थर का टुकड़ा उसे मिल गया। वह चलते-चलते एक बार फिर उस प्राकृतिक सुषमा की छवि को पलकों के प्याले में फर लेना चाहती थी।

...पांव ठिठके, आंखें स्थिर हो गईं। चालीस-पचास गज़ नीचे, एक पेड़ के पास एक पहाड़ी किसान की गोद में जवान-मांसल औरत पड़ी हुई थी। औरत बेसुध थी, पहाड़ी उसके शरीर से खेल रहा था।...

सुमन को चक्कर आ गया। पहाड़ी ने औरत को बांहों में भींच लिया... सुमन को लगा वह गिर पड़ेगी। उसने हाथ का पत्थर नीचे फेंक दिया और धीरे-धीरे पगडंडी पर चलने लगी। उसके पांव कांप रहे थे। हवा तेज़ हो गई थी। उसे लगा, उसके सारे कपड़ हवा उड़ा ले जाएगी...! और शायद वस्त्रहीन सुमन को भी किसी अन्धेरी सुनसान घाटी में अकेली सिसकने को पटक देगी...!

"नहीं...नहीं!" उसके मुंह से अचानक शब्द फूटे। मौत के ख्याल से ही वह पसीने-पसीने हो चली थी। उसने कसकर चेस्टर पकड़ा और पगडंडी पर दौड़ने लगी।

जैसे-तैसे गिरती-पड़ती सुमन अपने होटल पहुँची। कमरा अन्दर से बन्दकर वह बिस्तर पर औंधी जा गिरी। वह बुरी तरह थक गई थी।

दूसरे दिन सुमन को हल्का ज्वर-सा हो आया। सर दर्द से फटा जा रहा था। उसने एस्प्रो मंगाकर चाय के साथ ली।

कहीं वाहर जाने का मूड ही न था। खाली लेटे-लेटे वह ऊब गई।

उसने अपनी मोटी कापी जैसी बरसों पुरानी डायरी निकाली। उसी के पृष्ठ उलटने लगी। ··

१५ जुलाई

मैं टीचरी करते ऊब गई हूँ। अस्सी रुपये में मां-बेटी का गुजारा नहीं होता। ·····

टाइप व शार्टहैण्ड भी सीखना शुरू किया है। देखें, जिन्दगी किधर मुड़ती है।

१२ नवम्बर

जिन्दगी समय के इशारे पर चल रही है। घड़ी की सुइयां भीं अविराम चलते नहीं थकतीं। आखिर मेरे जीने का उद्देश्य क्या है?

रोटी के दो टुकड़ों के लिए ही यह सारा चक्कर चल रहा है क्या?

मां बीमार है। डाक्टर बिना फीस लिए घर नहीं आता। मां अस्पताल चलकर जा नहीं सकती। क्या करूं!···

२० दिसम्बर

आज जिन्दगी का एक और मनहूस दिन बीत गया है।

मैं आखिर किसके लिए जी रही हूँ? जिन्दगी का बोझ कब तक इस प्रकार ढोना पड़ेगा? ···

१० जनवरी

इण्टरव्यू के लिए कानपुर जाना है। मगर गाड़ी का किराया! बेकारों को रोटी न सही मगर कम से कम सरकार को इण्टरव्यू में जाने के लिए फ्री रेलवे पास जरूर देना चाहिए।

मगर उसे तो फ्री पास भी नहीं मिल सकता। अस्सी रुपये की मास्टरनी जो ठहरी!

२५ जनवरी

इण्टरव्यू हो गया। लगता है जिन्दगी अब करवट लेगी। उसे नियुक्ति-पत्र भी आज मिल गया।

एक सौ पचास रुपये दो आदमियों के लिए कम नहीं होते। फिर इस देश में औसत आदमी की वार्षिक आमदनी तीन सौ रुपये से भी कम है।''''उसे तो साल में अट्ठारह सौ मिलेंगे।'''

अगर एक वर्ष तक उसे मकान का किराया न देना पड़े, राशन मुफ्त मिल जाया करे और मां बीमार न पड़े'''तो वह कम से कम पूरे डेढ़ हजार बचा लेगी।

जब अस्सी रुपये की मास्टरी करती थी, तब मुश्किल से दस रुपये महीने मां बचा लेती थी। मां कहा भी करती थी, 'पांच सौ रुपये इकट्ठे हो जाएं, तो तेरे हाथ पीले कर दूं!'

कभी-कभी मजाक में मैं कह बैठती थी, ''जब तक तुम्हारे पांच सौ इकट्ठे होंगे, मैं बूढ़ी हो जाऊंगी। फिर ब्याह करके भी क्या करूंगी!'

मां की आँखें गीली हो उठतीं।

'''उस हिसाब से डेढ़ हजार रुपये जुड़ गए तो मेरे तीन विवाह हो सकते हैं। द्रौपदी के पाँच पति थे, मेरे तीन ही सही!'''

१२ फरवरी

जिन्दगी सरपट भागी जा रही है। माँ रुपये जोड़ने में लगी है। एक-एक पैसा दाँत से पकड़ती है।

आज मां को बिना बताए, चोरी से एक फिल्म देखी है—'फिर सुबह होगी।'

क्या मेरी अंधेरी जिन्दगी में भी कभी सूरज चमकेगा, सुबह आएगी?'''

१३ मार्च

माँ सूदखोर बन बैठी है। कहीं सूद के लोभ में मूल भी न गँवा बैठे।'''

रामू धोबी को पचीस रुपये उधार दिए हैं। कहती है, एक रुपया महीना ब्याज देगा।···ब्याज भले ही दो-चार महीने दे दे, मगर रुपये पचीस बरस में भी न लौटेंगे।

··· सचमुच यह रुपया ही सारी बुराई की जड़ है। विनिमय की कठिनाई को दूर करने के लिए साधन के रूप में जिसका आविष्कार हुआ था···आज वही साध्य बन बैठा !···

२० अप्रैल

मां ने आज एक लड़का देखा है। पहली बीवी मर गई है, सिर्फ तीन बच्चे हैं। परचून की दुकान है।

···'एकदम गऊ है (सांड़ नहीं !)! कहता है मुझे सिर्फ औरत चाहिए, दहेज नहीं।'···

मां भी कितनी भोली है ? उसे बीबी नहीं, बच्चों की देखभाल करने के लिए मुफ्त की आया की जरूरत है। नौकरानी तनखाह लेगी, मगर बीबी बिना तनखाह के बच्चों और उनके बाप की सेवा करेगी !··· कितनी सस्ती बीबी मिलती है, फिर भी मूर्ख लोग दहेज भी साथ चाहते हैं !···

११ मई

कानपुर में बड़ी सड़ी गर्मी पड़ती है।···

मां भी अजीब है ! मैंने कितना कहा, 'शादी मेरी किस्मत में नहीं, मुझे रुपये दो···मैं पहाड़ों पर घूम आऊँ।' मगर वह तैयार ही नहीं होती। उसकी दृष्टि में मैं अभी भी नन्ही-सी गुड़ियां हूँ।

१४ जून

····औरत को आखिर लोग समझते क्या हैं ?

जरा-सा किसी की तरफ देखकर हंस दी, वह सुबह-शाम आगे-पीछे चक्कर लगाना शुरू कर देता है।

मेरे बाप की उम्र के हैं रेड्डी साहब, मगर कैसी-कैसी बातें करते हैं। मुझसे बड़ी उनकी लड़कियां हैं, मगर फिर भी उन्हें शर्म नहीं आती।

मेरे साथ पिक्चर देखना चाहते हैं, मुझे साथ पिकनिक पर ले जाना चाहते हैं ?

कहते हैं पचीस रुपये की तरक्की उन्होंने मेरी कराई ! तनखाह कम्पनी देती है, मगर फायदा रेड्डी उठाना चाहते हैं ।

एक दिन डायरेक्टर साहब से शिकायत करनी ही पड़ेगी !

५ जुलाई

सभी एक से बढ़कर एक रंगे सियार हैं। डायरेक्टर साहब से क्या शिकायत करूं, वे तो स्वयं एंग्लो इंडियन टेलीफोन आपरेटर को साथ लिए खुले आम घूमा करते हैं ।

यह आफिस नहीं, लगता है—अय्याशों का अड्डा है ।...

१५ जुलाई

रेड्डी से पीछा छूटा, बम्बई ट्रांसफर हो गया। नये साहब आ रहे हैं मिस्टर पिंगे ।

२ अगस्त

पिंगे ने चार्ज ले लिया । बहुत भला आदमी है । कभी निगाह उठाकर उसने मुझे देखा भी नहीं ।

२५ अगस्त

दुनिया में भले लोगों की कमी नहीं ।

कल पिंगे साहब पूछ रहे थे—'तुम्हारा दो सौ रुपये में खर्च चलता है कि नहीं ?.....'

और आज मुझे पचास रुपये का एक और इन्क्रीमेंट मिल गया ।

उसकी आँखें जलने लगीं । उसने डायरी वाली मोटी कापी बन्द कर दी ।

पिछले चार-पांच साल से वह इसी कापी पर डायरी लिखती चली आ रही है। इसे वह बहुत संभाल कर रखती है। उसे डायरी दर्पण की तरह नजर आती है। जब चाहो, वेनकाब अपना चेहरा देख लो !

६

रमेश दिन-प्रतिदिन रेखा के निकट आता गया। रेखा भी अनजाने रूप से स्वतः उसकी ओर आकर्षित होती गई। मगर हमेशा मन में यह सन्देह बना रहता कि कहीं यह भी धोखा देकर एक दिन चम्पत न हो जाए।

डैडी ने दस हजार रुपये बैंक ड्राफ्ट के साथ एक पत्र भी भेजा था।

"··· मैं तुम्हें खुश देखना चाहता हूँ। तुम्हारा जहां मन लगे, रह सकती हो। रुपये जितने चाहो और मंगा सकती हो।

"··· मनुष्य जीवन में कुछ खोकर ही सीखता है। तुम एक ठोकर से ही इतनी घबड़ा गईं।····

"ड्राइवर कार लेकर रवाना हो चुका है। कल नैनीताल पहुँच जाएगा। मेरी के साथ तुम्हारे कपड़ों से भरी दो बड़ी अटैची भी भेज दी है।···"

पत्र पढ़कर रेखा की आंखों में दो बूंद आंसू छलक आए। कितने अच्छे हैं डैडी ?···

तभी रमेश ने कमरे में यह कहते प्रवेश किया—"क्या अन्दर आ सकता हूं ?··· "

रेखा ने मुस्कराते हुए कहा—"अन्दर घुसकर फिर यह प्रश्न करने का क्या तुक है ?"

"आई एम वेरी सॉरी !··· क्या मैं इस सोफे पर बैठ सकता हूँ ?"

विना उत्तर की प्रतीक्षा किए रमेश ने घंटी बजाई और सोफे पर धम से वैठ गया। वेयरा आया।

"एक गिलास ठंडा पानी मेम साहब के लिए और मेरे लिए दो एक्सप्रेसो काफी !"

रेखा को हंसी आ गई।

रमेश बोला—"मैं आपके लिए वहुत अच्छी खबर लाया हूँ।"

"क्या ?"

"पहले मुंह मीठा कराइये !"

बेयरा ट्रे रखकर चला गया। रेखा ने एक चम्मच चीनी उठाकर उसके मुंह की ओर बढ़ाई – "लीजिए, मुंह भी मीठा कर लीजिए…!"

रमेश ने रेखा की उंगलियां अधरों से छू दी। रेखा का हाथ कांपा, चम्मच नीचे गिर पड़ा।

"अरे, यह तो नमकीन है !" रमेश बोला।

शर्म से रेखा की नजरें नीचे झुक गईं। रमेश ने चट एक शेर पढ़ा :

"फिर न कीजे मेरी गुस्ताख-निगाही का गिला,
देखिए आपने फिर प्यार से देखा मुझको !"

रेखा के दिल-दिमाग में एक-एक शब्द सुगंध बन समा गया। कमरे में चुप्पी छा गई।

कुछ देर बाद, रमेश काफी बनाता बोला–"आपने खबर पूछी नहीं ?"

"पहले शायरी कर लीजिए !"

रमेश ने ठंडी सांस लेकर कहा—"आपकी नजरें किसी को भी शायर बना सकती हैं।"

रेखा को मजाक सूझा—"एक बार चिड़ियाघर में मैंने एक बन्दर को दो मिनट गौर से देखा, वह शायर बन गया। सुना है, उसकी शायरी पर मुग्ध होकर एक अमेरिकन औरत चिड़ियाघर को बड़ी रकम देकर उसे अपने साथ न्यूयार्क ले गई !"

"अच्छा !" रमेश ने गम्भीरता से कहा—"आप उस बन्दर को पहचानती तो हैं ?"

"हां. हां, बहुत अच्छी तरह !"

रमेश ने काफी सिप करते हुए कहा—"आपने फिर वह खबर नहीं पढ़ी क्या ?…"

रेखा ने नकारात्मक रूप से गर्दन हिलाई।

'वह बन्दर बिना पासपोर्ट के कस्टम वालों की नजर बचाकर फिर भारत आ गया।'' आजकल सुना, नैनीताल में आया हुआ है। उसके डर से लड़कियों ने घर से बाहर निकलना बन्द कर दिया है.....!''

रेखा खिलखिला पड़ी—"आपसे बातों में कोई नहीं जीत सकता!"

"आपका ही तो सिखाया हुआ बन्दर हूँ!" रमेश ने बड़ी अदा से कहा।

"अच्छा, कुछ काम की भी बात करेंगे या हवाई हाँकते रहेंगे!" रेखा ने बात बदलने को कहा।

"मेम साहब, धीरे से।" उसने जेब से एक लिफाफा निकालकर रेखा के आगे बढ़ा दिया।

दुर्गापुर से आया 'नियुक्ति-पत्र' था। एक हजार रुपये महीने पर उसकी प्लांट-इन्जीनियर के पद पर नियुक्ति हो गई थी। एक महीने के अन्दर चार्ज लेना था।

रेखा ने हाथ बढ़ाया—"कान्ग्रेचुलेशन्स!"

रमेश ने हाथ दबाकर माथे से लगा लिया।

"कहीं बाहर भी चलिएगा या ऐसे ही बोर करिएगा!" रेखा उठती बोली।

"मेम साहब, बोर तो आप कर रही हैं जो अभी तक तैयार भी नहीं हुईं!"

रेखा ने रमेश के एपाइंटमेंट की खुशी में एक शानदार पार्टी दी। रेखा की तीन-चार सहेलियाँ व रमेश के कुछ मित्र उस पार्टी में सम्मिलित हुए।

उसी में रेखा का परिचय जोसेफ से भी हुआ।

जोसेफ भी रमेश के साथ रायल होटल में ठहरा हुआ था। उसका कमरा रमेश से सटा हुआ था इसलिए सुबह-शाम अक्सर भेंट हो जाती। धीरे-धीरे वह उसका घनिष्ठ मित्र बन गया। रमेश ने कभी यह जानने की कोशिश न की कि वह कौन है, क्या करता है।

रमेश विदेशों की सैर करने के बाद शराब से तनिक परहेज नहीं करता था। जोसेफ को निकट लानेवाली चीज शराब ही थी।

एक दिन रमेश अपने कमरे में बैठा रात्रि में सोने से पहले शराब के पेग चढ़ा रहा था, तभी जोसेफ ने किवाड़ खटखटाए।

"कौन?"

रमेश ने दरवाजा खोला।

"मैं जोसेफ, तुम्हारा पड़ोसी!"

सभ्यतावश रमेश ने बैठने को कहा।

बैठकर जोसेफ ने बोतल उठाई, फिर गौर से लेबुल देखकर बोला—"बाई गॉड, तुम बड़ा लकी है। इतना ड्यूटी देकर भी इम्पोर्टेड पीता है। हम किधर से एफोर्ड करें। सूंघने को भी यह नहीं मिलता। बीबी-बच्चा तो नहीं है?"

"मैं बैचलर हूँ।"

"तभी से, इन्जाय फ्रेण्ड! ईट, ड्रिंक एण्ड बी मेरी शादी के लफड़े में मत पड़ना! नहीं तो हमारी तरह कण्ट्री लिकर पीना पड़ेगा!"

रमेश को आदमी दिलचस्प लगा। उसने पेग बढ़ाया।

"थैंक्स" सो काइंड आफ यू!" जोसेफ ने पेग ऊपर उठाया—"फार हेल्थ, वेल्थ एण्ड प्रासपर्टी आफ !"

रमेश को नाम बताना पड़ा।

"कितना स्वीट नाम है! लांग लिव लार्ड रमेश…!" जोसेफ ने मुफ्त के पेग खाली करने शुरू कर दिए।

इसी प्रकार धीरे-धीरे वह रमेश के निकट आता गया। कभी-कभी रमी भी खेल लेता। कभी चालीस-पचास दे जाता, कभी साठ-सत्तर ले जाता!

रमेश का विचार उसे पार्टी में ले जाने का नहीं था। उसने उसे पहले से इन्वाइट भी नहीं किया था। मगर ऐन वक्त पर जब वह सज-

संवरकर डिनर-सूट पहनकर कमरे से बाहर निकला, जोसेफ मिल गया।

"हैलो, प्रिंस !" जोसेफ विलायती सेंट की महक को नथुनों से ऊपर खींचता बोला—"किधर सवारी जाता ? शादी करने तो नहीं जाता ··!"

"नो···नो जोसेफ ! मैं बहुत जल्दी में हूँ।" रमेश ने पीछा छुड़ाना चाहा।

"मैं समझ गया।" जोसेफ पाइप से धुआँ छोड़ता बोला—"तुम अपना विलवेड से मिलना मांगता ! ·· हम भी उसे देखेगा !"

रमेश ने देखा, सारा दिमाग चाट जाएगा मगर यह जल्दी पिंड नहीं छोड़ेगा। उसने उसे भी साथ चलने को कहा।

होटल से बाहर निकलते ही रमेश के कानों में मोटर के हार्न की आवाज सुनाई पड़ी। उसने घूमकर देखा, रेखा एक लम्बी नीली गाड़ी में बैठी हार्न बजा रही है। रमेश अभिवादन कर उसकी ओर बढ़ा। पीछे-पीछे जोसेफ भी था।

रेखा ने अगला दरवाजा खोला। रमेश को उस वक्त जोसेफ की उपस्थिति बहुत बुरी लगी। सभ्यतावश परिचय कराना पड़ा—"माई फ्रेण्ड···जोसेफ·· मिस रेखा !"

जोसेफ ने चट हाथ आगे बढ़ा दिया। मगर रेखा ने पहले ही नमस्कार कर, उस बढ़े हुए हाथ को वापस पैंट की जेब में अपना मुंह छिपाने को मजबूर कर दिया।

रेखा ने रमेश से कभी अपने डैडी या कार के सम्बन्ध में कोई बात न की थी। रमेश इतने दिनों से उसके साथ घूमता था, मगर कभी उसने इस शानदार गाड़ी को नहीं देखा। उसने अनुमान लगाया, हो सकता है रेखा अपनी किसी फ्रेण्ड की गाड़ी लेकर उसे बुलाने चली आई हो।

पार्टी में रेखा ने रमेश का सबसे परिचय कराया। जोसेफ ने अपना परिचय स्वयं सबको दिया—"जोसेफ फ्राम बाम्बे···! मैं वहां फिल्म-इण्डस्ट्री में काम करता हूँ। पहाड़ों पर घूमना, नये दोस्त बनाना हॉबी है। ··"

डिनर के बाद बैण्ड बजने लगा। जोसेफ ने रमेश को बाल-डांस के लिए उत्साहित किया। रमेश ने हाथ बढ़ाया। रेखा को निमन्त्रण स्वीकार करना पड़ा। दूसरे जोड़ों के साथ रमेश व रेखा भी थिरकने लगे।

जोसेफ पाइप से बैठा धुआँ निकाल रहा था। उसकी दृष्टि रेखा के कीमती सफेद मोतियों के हार, हीरे के चमकते टाप्स, लौंग व हाथ की अंगूठियों के इर्द-गिर्द घूम रही थी। जिस लम्बी गाड़ी पर वह बैठकर आया था, उसके गोल पहिये·· अभी तक उसके दिमाग में गतिशील थे व हार्न की सुरीली आवाज कानों में गूंज रही थी।

उधर रमेश व रेखा की सांस एक-दूसरे को स्पर्श कर रही थी।

रेखा की कमर में हाथ व आंखों में आंखें डाले रमेश फुसफुसाया— "तुम कौन हो ?"

रेखा मुस्कराई – 'आपको क्या दीखती हूँ ?"

रमेश ने हाथ दबाते हुए धीरे से कहा "मर्डरर !"

रेखा की आंखों के लाल डोरे, गालों पर लगा गुलाबी रूज, होंठों की गाढ़ी लाल लिपस्टिक·· सब मानो पुकार-पुकारकर उसके खूनी होने की घोषणा कर रहे थे।

"किसका खून किया है मैंने ?"

रमेश ने उसकी नाजुक हथेली अपने सीने से लगा ली। कुछ देर तक वह हाथ रखे, दिल की धड़कनें गिनती रही फिर धीरे से बोली – "सांस तो चल रही है·· मरा नहीं, यह तो जिन्दा है !···"

रमेश मुस्कराता बोला "हालत नाजुक है, अगर धड़कनें इसी तरह तेज होती गईं तो··!"

"अच्छा जी !" रेखा आंखें फैलाती बोली –"मुजरिम खुद होकर दूसरे पर दोष मढ़ते शर्म नहीं आती !"

"मैं भी हाथ रखकर क्या धड़कनें गिन सकता हूँ···?" रमेश ने उसे अपने सीने से धीरे से चिपका लिया। उसकी नस-नस में बिजली दौड़

गई। वह इस अप्रत्याशित सुख के लिए तैयार न थी। उसने आंखें बन्द कर लीं।

मगर तभी बैण्ड रुक गया और तालियों की गड़गड़ाहट के बीच नाचते जोड़े वापस अपनी सीटों पर जाकर बैठने लगे। रमेश को यह इण्टरवल बुरा लगा।

रेखा को कान्ग्रेचुलेट करता जोसेफ बोला—"यू आर ए गुड डांसर! आप बहुत बड़ा आर्टिस्ट बन सकता है। आपका स्टेपिंग देखकर मैं हैरत में पड़ गया, बिना प्रैक्टिस के बैंड की रिद्म पर इतना अच्छा डांस करना ···कमाल है। बाम्बे में फिल्म इण्डस्ट्री में सब कूड़ा जमा है। जिसे जरा कूल्हे मटकाने आ गए, डांसर बन बैठी। अगर आप जैसी दो-चार आर्टिस्ट वहां पहुँच जाएं तो इण्डस्ट्री में सेनसेशन हो जाए !"

रेखा ने धीरे से मुस्कराकर कहा—"थैंक्स !···मैं फिल्म देखती ज़रूर हूँ, मगर कभी खुद स्क्रीन पर फ्लैश करने की कोई तमन्ना नहीं है।"

उसकी बात पर सबने एक जोर का ठहाका लगा दिया। जोसेफ का एक क्षण को चेहरा पीला पड़ गया।

जोफेस ने विषय बदलते हुए जेब से ताश की एक गड्डी निकाली। रमेश ने व्यंग्य कसा—"यहां भी अपना धन्धा शुरू कर दिया!"

"नो सर" जोसेफ बोला—"इसे कहते हैं चीन का जादू, हाथ की सफाई! बिना टिकट का तमाशा है, कोई बीबी है, कोई बादशाह है!"

सब हंस पड़े।

जोसेफ ने ताश की गड्डी को अच्छी तरह फैलाकर टेबुल पर रख दिया। पत्तों में से छांटकर एक बादशाह व तीन बेगमें निकालीं। फिर ताश की गड्डी को उठाकर एक तरफ रख दिया और बोला—"इस बादशाह के होटल ताज में ये तीनों बेगमें एक दिन चाय पीने गईं। सुबह का वक्त था, होटल में कोई नहीं था। चाय पीकर इन बेगमों ने बादशाह को सौ रुपये का नोट दिया। उस वक्त बादशाह की

दराज़ में सब सौ-सौ के नोट पड़े थे। बादशाह इन बेगमों को इन्तज़ार करने को कहकर, नोट भुनाने बगल की दुकान में गया। बेगमों को मुंह मांगा वरदान मिला। तीनों जबरदस्त चोर थीं। उन्होंने हाथ की सफाई शुरू की।"

जोसेफ ने ताश की गड्डी उठाई—"एक बेगम सबसे ऊपर की मंजिल में चढ़ गई।"

उसने ताश का बेगम वाला पत्ता उठाकर गड्डी के ऊपर रख दिया।

"दूसरी बीच की मंजिल में घुस गई।" उसने दूसरी बेगम का पत्ता गड्डी के बीच में मिला दिया।

तीसरा पत्ता गड्डी में सबसे नीचे रखकर वह बोला—"और तीसरी ने नीचे की मंजिल में हाथ साफ करना शुरू किया। अभी वह कैश-बाक्स से रुपये निकाल ही रही थी कि बादशाह आ पहुँचे। बेचारी रंगे हाथ पकड़ी गई। मगर बादशाह जैसे ही नीचे उसे पकड़ने पहुँचे, वह ऊपर भागी!"

जोसेफ ने बादशाह वाला कार्ड सबसे नीचे रखकर गड्डी ऊपर-नीचे मिला दी। फिर अच्छी तरह ताश फेंकता बोला—"बस, भागदौड़ मच गई। आगे बेगमें, पीछे बादशाह! नीचे की मंजिलवाली बेगम तो, ऊपर की मंजिल में दूसरी बेगम के साथ बादशाह को आसानी से मिल गई। मगर बीच की मंजिल मे जो बेगम छिप गई थी, उसका कुछ पता ही नहीं चलता!"

जोसेफ ने गड्डी रेखा की ओर बढ़ाई—"जरा आप भी ट्राई करें, शायद उस बेगम का पता चल जाए!"

रेखा ने हंसते हुए ताश के पत्ते फेंट दिए। जोसेफ ने फिर गड्डी रमेश को दी। उसने भी वैसा ही किया। रमेश से लेकर जोसेफ ने बारी-बारी से सबको गड्डी फेंटने को दी। बाद में बोला—"आप सबकी मेहनत से

वह बेगम आखिर पकड़ी गई। बादशाह ने उसे व उसकी साथी दोनों बेगमों को पकड़कर पुलिस के हवाले कर दिया।"

जोसेफ ने गड्डी उलटकर टेबुल पर बिछा दी। सबने आश्चर्य से देखा, कुछ पत्तों के बाद बीच में एक जगह बादशाह के साथ तीनों बेगमें इकट्ठी लगी हुई थीं। सबने प्रशंसा करते हुए तालियां बजाईं—"वण्डरफुल! फाइन...!"

जोसेफ ने उत्साहित होकर बहुत-से ताश के जादू दिखाए। उसने पार्टी में एक नया रंग ला दिया। रमेश को ही नहीं, रेखा को भी आदमी दिलचस्प व मनोरंजक लगा।

रात साढ़े ग्यारह बजे रेखा उसे व रमेश को रायल होटल में छोड़कर गई। कमरे की तरफ बढ़ता जोसेफ बोला—"ह्वाट ए नाइस सेलेक्शन! भाई. यू आर वेरी लकी। मैं कान्ग्रेचुलेट करता हूँ।"

"थैंक्स!" रमेश बोला।

"यह तो बताया नहीं, पार्टी किस खुशी में हुई थी!" जोसेफ ने पूछा।

रमेश को बताना ही पड़ा—"दुर्गापुर स्टील प्रोजेक्ट में मेरे प्लांट इंजीनियर के पद पर एपाइण्टमेंट की खुशी में यह पार्टी मिस रेखा ने दी थी!"

"डबल कान्ग्रेचुलेशन्स!" उसने हाथ मिलाया—"एक पार्टी तुमसे भी ड्यू है!"

रमेश इशारा समझ गया। बोला—"अभी लो!"

जोसेफ पेग खाली करता बोला—"यार, तुम भी खूब फ्रेण्ड है। तुमने बताया ही नहीं, डैडी क्या करते हैं?"

"वह आई० सी० एस० हैं। इस वक्त इलाहाबाद डिविजन में कमिश्नर हैं!"

जोसेफ ने दूसरा पेग खाली करते हुए कहा—"वर्दी सन् आफ ए वर्दी फादर!...."

७

सुमन की तबीयत ठीक हुई तो उसने भुवाली के आसपास घूमने का प्रोग्राम बनाया।

भीमताल जानेवाली बस के लिए लम्बी क्यू लगी हुई थी। यद्यपि महिलाओं के लिए अलग खिड़की बनी हुई थी, मगर इस वक्त सभी खिड़कियाँ बन्द थीं। पूछने पर पता चला कि बस आने पर ही टिकट बटेंगे।

करीब आध घंटे बाद बस आई, मगर खिड़कियाँ नहीं खुलीं। सभी यात्री झल्लाने लगे। स्टेशन-इंचार्ज ने सफाई दी—"बस में जगह नहीं थी। नैनीताल से ही भरी हुई आई थी।"

एक नौजवान चिल्लाया—"और जो दो सवारी यहाँ से बैठीं?"

"बिना टिकट के सवारी बैठ गई क्या?"

लम्बी दाढ़ीवाले मौलाना बोले—"अरे भाई, सब चलता है। सुराज माने अपनी हकूमत। सभी जगह धांधली है। यह भी कोई इंसाफ है, घंटों से लाइन में खड़े रहो ⋯ मगर जब बस आए तो अन्दर से ही टिकट बँट जाए!"

सरदारजी ने छींटा कसा—"यही तो मौसम कमाई का है। सिनेमा के टिकटों की तरह ब्लैक में टिकट बेचना चाहिए। आदमी अपनी गरज को ज्यादा पैसे देगा⋯!"

एक वृद्ध पंजाबी महिला बोली—"यही हाल रहा तो फिर शाम तक टिकटें किसी को नहीं मिलेंगी। यहाँ इतनी सवारियाँ हैं कि दो खाली बसें भर जाएँ।"

मौलाना उत्साहित होते बोले—"यहाँ से स्पेशल बस क्यों नहीं चलाते!"

स्टेशन-इंचार्ज पर इन बातों का यह असर पड़ा कि उसने सीधे जनरल मैनेजर से नैनीताल फोन मिलाया। उन्होंने एक बस भुवाली से भीमताल के लिए चलाने की स्वीकृति दे दी।

खिड़कियां खुलीं। भीड़ में खड़े हर व्यक्ति को टिकट की जल्दी थी। महिलाएं तीन-चार थीं। सुमन तीसरे नम्बर पर खड़ी थी। तभी एक नवयुवक गले में स्कार्फ डाले, कन्धे पर कैमरा लटकाए सुमन के पास आया और धीरे से गिड़गिड़ाया—"प्लीज, एक टिकट मेरे लिए भी भीमताल का ले लें!"

उसने पांच का नोट आगे बढ़ाया। सुमन पहले से ही एक पांच का नोट पकड़े हुए थी। उसने नोट नहीं लिया। युवक ने पुनः प्रार्थना की—"मैडम, एक्सक्यूज मी ··· एक टिकट मेरा भी ले लें!"

सुमन ने दो टिकट ले लिए। टिकट पाकर उस नवयुवक की बाछें खिल गईं। सुमन को धन्यवाद देता बोला—"अगर आप न होतीं तो मुझे टिकट शायद ही मिलता!"

अपर क्लास में सुमन की बगल में बैठता नवयुवक बोला—"चेंज मेरे पास भी नहीं है। भीमताल तक तो इन्तजार कर ही सकती हैं!"

सुमन ने व्यंग्य कसा—"हां, जेब में टिकट पहुँच गया तो भीमताल भी पहुँच जाएंगे। अगर बिना पैसों के टिकट न मिलता तो चेंज भुवाली में जरूर मिल जाती!"

झेंपता हुआ नवयुवक बोला—"आप शर्मिंदा न करें। यकीन न हो तो पांच का नोट जमा कर लीजिए!"

सुमन हंसी न छिपा सकी। उसे हंसते देखकर नवयुवक स्कार्फ ठीक करने लगा।

बस चल पड़ी। ड्राइवर पहाड़ी था। बहुत तेज बस दौड़ा रहा था। बीड़ी भी एक हाथ से पी रहा था। पहाड़ी मोड़ों पर जब ड्राइवर नाक से धुआं निकालते पीछे मुड़कर अपने साथियों से बातें करने लगता··· तब सुमन के प्राण नाखूनों में समा जाते।

बस के झटकों से प्रायः उसके कन्धे नवयुवक के कन्धों से छू जाते।

जब बस नीचे ढाल पर उतरने लगी तो सुमन सचमुच घबड़ा गई। बगल में बैठे नवयुवक से बोली—"देखिए, आप ड्राइवर को धीरे चलाने को कहें। अगर कोई एक्सीडेंट हो गया...!"

नवयुवक बोला—"देखिए मेरा नाम सतीश है। आप नाम लेकर पुकारेंगी तो मुझे समझने में आसानी होगी।"

"मुझे आप सुमन कह सकते हैं।" सुमन को बताना पड़ा।

"अच्छा, सुमनजी नमस्ते!" सतीश ने सचमुच दोनों हाथ जोड़ दिए।

जिस प्रकार लापरवाही से ड्राइवर तेज बस दौड़ा रहा था उससे स्पष्ट था कि वह शराब पिए हुए है। एक जगह सामने से आते हुए पहाड़ी टट्टुओं को बचाने के लिए उसने इतने जोर से ब्रेक लगाया कि लोग सीटों से नीचे जा गिरे। सुमन नीचे तो न गिरी, सतीश की गोद में जरूर अटक गई। सतीश ने किसी प्रकार अपने को संभाला, सुमन को सहारा देने में उसके हाथ उसके दोनों वक्षों को छू गए। सुमन को रोमांच हो आया।

सभी यात्री चिल्ला पड़े—"बस रोक दो। हमें अपनी जान नहीं गंवानी है!"

ड्राइवर भी अक्खड़ था—"जल्दी उतरो जिसे नहीं जाना है।"

इस बार सतीश बोला—"ऐसे ही गाड़ी चलाई जाती है।"

"तुम्हीं चलाकर बता दो!"

सतीश अपना कैमरा सुमन के पास छोड़कर उठ खड़ा हुआ—"उतरो नीचे, मैं चलाकर बताता हूं।"

कण्डक्टर बोला—"ड्राइविंग लाइसेंस भी है!"

ड्राइवर गुर्राया—"बाबू, यह दिल्ली-बरेली की समतल सड़क नहीं जो गाड़ी मेम साहब भी चला लेती हैं। यहां तो जरा-सा चूके तो बस खड्डे में।"

सरदारजी चिल्लाए—"कम्प्लेंट बुक लाओ। मैं रिपोर्ट करूंगा। शराब पीकर गाड़ी चलाई जाती है।"

"हां, हां, कर दो कम्प्लेंट। धौंस क्यों जमाते हो!" इंजन बन्द कर ड्राइवर नीचे उतरा—"तुम्हारे कम्प्लेंट से देखें गाड़ी कैसे आगे बढ़ती है!"

सतीश को बैठाते मौलाना नर्मी से ड्राइवर से बोले—"भाई, झगड़ा क्यों करते हो? तुम्हारी रोजी हमें थोड़े लेनी है...।"

ड्राइवर भी एक ही छंटा हुआ था—"रोजी तुम क्या दोगे या लोगे मौलाना? तुम्हें और मुझे रोजी देनेवाला तो ऊपर बैठा है। बिना उसकी मर्जी के मेरा कोई बाल बांका नहीं कर सकता।"

सतीश को गुस्सा आया—"क्या तुम सबकी जान लोगे?"

"मेरे अन्दर जान नहीं है क्या?" ड्राइवर ने त्यौरियां चढ़ाईं।

सतीश का जवान खून खौल उठा।

"तुझे अभी बताता हूँ कि तेरे अन्दर कितनी जान है।" वह उठकर जैसे ही आगे बढ़ा, न जाने किस अन्तःप्रेरणा के वशीभूत होकर सुमन ने उसका हाथ पकड़ लिया।

सतीश हाथ छुड़ाते बोला—"नहीं, आज इसे जबान लड़ाने का इनाम देना ही पड़ेगा।"

मौलाना जैसे दो-चार बुजुर्ग यात्रियों ने किसी प्रकार बीच-बचाव कर मामला ठंडा किया। बड़ी खुशामद के बाद ड्राइवर गाड़ी चलाने को तैयार हुआ।

इसका असर इतना ही हुआ, ड्राइवर ने बीड़ी पीना बन्द कर दिया और पीछे मुड़कर बातें करना भी बन्द कर दिया। मगर बस की रफ्तार में कोई अन्तर नहीं पड़ा।

सुमन धीरे से बोली—"क्या सरकारी रोडवेज होने मात्र से इन्हें मनचाही रफ्तार से बस दौड़ाने की आजादी मिल जाती है? पुलिस भी चालान नहीं करती?"

"पुलिस तो पहाड़ों में मिनिस्टरों की अगवानी करने के लिए रखी जाती है। सिपाहियों की ड्यूटी बड़े साहबों के घर मेम साहब का बच्चा खिलाने की होती है।....'' सतीश का खून अब भी खौल रहा था।

''बड़ी धांधली है। रोज ही इस प्रकार बसें पैड़ों से टकराती हैं, खाइयों में गिरती हैं''आखिर यात्रियों के जान-माल की भी कोई कीमत है या नहीं ?'' सुमन बोली।

सतीश ठंडी सांस लेता बोला—''करोड़ों लोग जिस देश में अन्न के लिए तरसते हों वहां सौ-पचास अगर रोज भी ट्रेन या बस-एक्सीडेंट में शहीद हो जाएं तो क्या फर्क पड़ता है ? सरकारी आंकड़ों में दिखाई जानेवाली प्रति व्यक्ति की औसत सालाना आमदनी में इससे कुछ कमी नहीं पड़ती।''

बस नीचे पहाड़ों के बीच मैदानी समतल भूमि में आ गई थी। नीचे से पहाड़ों की ऊंची चोटियां कितनी सुन्दर दीख पड़ती थीं ! सुमन ऊपर चोटियों की ओर देखते हुए मन ही मन आश्चर्य करने लगी, कई हजार फुट नीचे '' कितनी जल्दी वह सब आ गए !

भीमताल केवल दो मील ही दूर रह गया था। नाम से ही स्पष्ट था कि यहां जरूर कोई ताल होगा।

उसकी बगल में सतीश बैठा था। नाक जरा लम्बी थी, मगर रंग दूध जैसा गोरा था। गुस्से से गाल गुलाबी हो उठे थे। हवा से बाल उड़ रहे थे। धूप का काला चश्मा कितना सुन्दर लग रहा था। कैमरा अभी तक सुमन के हाथ में था। कैमरे की जब याद आई तो उसकी दृष्टि अपने हाथों पर पड़ी। यद्यपि रंग सांवला ही था, मगर सतीश के गोरे हाथों के सामने कितना काला नजर आ रहा था।

मन ही मन उसने अनुमान लगाया, जरूर कोई विद्यार्थी होगा। तभी खून में इतनी गर्मी है। चलो, एक हमसफर तो मिला। सुमन को लगा, उसकी चिरसंचित रंगीन कल्पना को आज जरूर कोई आधार प्राप्त हो जाएगा।

भीमताल आया। बस रुकी। लोग नीचे उतरने लगे। ड्राइवर ने बीड़ी सुलगाते हुए कंडक्टर से कहा --"भाई, जरा सवारियाँ गिन लो, कहीं कोई रास्ते में तो शहीद नहीं हो गया।"

सभी यात्री पिकनिक के मूड में थे। इसलिए किसी ने उधर ध्यान नहीं दिया। सबने व्यंग्य सुनकर भी अनसुना कर दिया।

सतीश भी आगे बढ़ गया। सुमन ने टोका—"अरे मिस्टर, कैमरा तो लीजिए!"

"अभी आपके पैसे भी तो देने हैं।" सतीश मुस्कराते हुए बोला।

"अच्छा तो अभी तक याद है आपको ?" सुमन बोली।

कई नाव वाले आकर घुमाने का आग्रह करने लगे। सुमन ने मज़ाक किया—"अगर मेरे साथ नाव पर चलने में आपत्ति न हो तो पैसे नाव वाले को आप दे सकते हैं।"

"नाव में बैठ तो सकता हूँ, मगर पतवार अपको पकड़नी होगी।"

आगे बढ़ते हुए सुमन बोली—"अगर पतवार मेरे हाथ से छूट गई ?"

"तो क्या हुआ! हम दोनों साथ-साथ डूब जाएँगे!" सतीश ने चश्मा हाथ में पकड़ते हुए कहा।

"अगर मैं आपके साथ न डूबना चाहूँ ?"

सतीश मुस्कराया—"तब पतवार आपको कसकर पकड़नी होगी। मुझे किनारे पहुँचाना होगा।'

"अच्छा जी!"

और दोनों खिलखिला उठे। धूप की चादर सूख चुकी थी। बादलों के बीच सूरज कहीं भटक गया था। बड़ा सुहावना मौसम हो गया था। सतीश आगे बढ़ते हुए बोला—"आइए, थोड़ा घूम लें। फिर नाव की सैर करेंगे।"

सुमन के पांव ही जमीन पर नहीं पड़ रहे थे। आगे एक पुलिया-सी पड़ती थी। दीवार के पास खड़ी होकर सुमन नीचे ताल का दृश्य

देखने लगी। पानी की छोटी-छोटी लहरों ने थपकियाँ देकर संगदिल पहाड़ों की रूखी चट्टानों को नया रूप दे दिया था। छोटे-छोटे, गोल, चिकने पत्थरों से टकराती लहरें कितनी चंचल प्रतीत हो रही थीं।

पहाड़ों के बीच इस छोटे-से मनोरम ताल को देखकर सुमन को लगा — ज़रूर, सदियों पहले इन पहाड़ों ने किसी से मोहब्बत की होगी। उसी प्यार की गर्मी से चट्टानें पिघली होंगी और यह छोटा-सा चश्मा ज़िंदगी की नई किरण बन अपने-आप फूटा होगा। तभी इन पहाड़ों पर फूल खिले होंगे, खुमानियाँ मँहकी होंगी, पक्षियों ने बसेरा किया होगा ..।

सतीश ने टोका "आप किस दुनिया में खो गईं, मेमसाहब !"

इसी वक़्त सूरज बादलों के घूंघट से झांका।

सतीश ने आग्रह किया —"अगर आपत्ति न हो तो इसी बैकग्राउण्ड में आपका एक चित्र ले लूं।"

"हाँ, लेकिन एक शर्त पर।"

"क्या ?"

"फोटो और निगेटिव दोनों मुझे देने होंगे।"

"मंजूर है !"

सुमन ने कैमरा उसे वापस कर दिया। सतीश ने पोज ठीक कर एक स्नैप ले लिया।

"चाहता था एक फोटो हम दोनों का साथ भी कोई खींच देता।"

सुमन ने भौहों की कमान टेढ़ी करते हुए कहा - "मगर तब निगेटिव कौन रखेगा और फोटो कौन लेगा ?"

"मैं सारे निगेटिव आपको सौंप दूंगा, मगर एक निगेटिव फिर भी ऐसा रह जाएगा, जिसे आप चाहकर भी न ले सकेंगी और मैं भी न दे पाऊँगा।"

"कौन-सा निगेटिव, जरा सुनूं तो ?" हंसते हुए सुमन बोली।

मेरी आंखों के कैमरे ने बिना मुझसे पूछे और बगैर आपकी इजाजत के एक फोटो ले लिया है। उसका निगेटिव मैं आपको कैसे लौटा पाऊंगा ?"

सुमन से कोई उत्तर न बन पड़ा। जिस प्रकार गुब्बारा हवा से फूल उठता है और फिर हवा के साथ ही ऊपर उठने लगता है, उसी प्रकार सुमन के पांव तो उस वक्त धरती पर थे, लेकिन मन हवा की डोर से बंधा, पतंग की तरह ऊपर उठता चला जा रहा था। उसे लगा, उसके कदम कहीं लड़खड़ा न जाएं। वह नीचे चंचल जल-तरंगों का नृत्य देखने लगी।

सतीश ने प्रश्न किया—"आप नाव की सैर नहीं करेंगी क्या ?"

"नहीं।"

"क्यों ?"

"डर लगता है।"

"किससे, मुझसे !"

"नहीं, उनसे।" उसने चंचल जल-तरंगों की ओर इंगित कर दिया।

सतीश का साहस बढ़ा। उसने हाथ पकड़ लिया—"चलिए, साथ ही डूबेंगे।"

सुमन की हथेलियां गर्म हो उठीं। रक्त-संचार द्रुतगति से होने लगा।

अपना हाथ छुड़ाते हुए बोली—"अच्छा, चलिए।"

नाव में बैठकर सुमन को ऐसा लगा जैसे वह कोई मधुर स्वप्न देख रही है।

सतीश ने पूछा - "आप अकेली हैं ?"

"नहीं।"

"और कौन है ?"

"आप जो हैं।" सुमन खिलखिला उठी।

कुछ देर सन्नाटा छाया रहा। बगल से दूसरी नाव गुजरी, ट्रांजिस्टर पर कोई मधुर गीत बज रहा था। नाव तेजी से आगे बढ़ गई और गीत के मधुर स्वर भी दूर हो गए।

"कहां ठहरी हैं?"

"भुवाली में।"

"होटल का नाम जान सकता हूं?"

"आप पुलिस-इंस्पेक्टर तो नहीं हैं!"

सतीश हंस पड़ा—"आप मुझे इतनी जल्दी पहचान गइ।"

सुमन का मुंह आश्चर्य से खुला रह गया—"तो क्या आप...?"

"जी हां, मैं सिर्फ रिसर्च-स्कालर हूं। घूमने आया हूं।"

सुमन ने पुनः पूछा - "यहां भी रिसर्च चल रही होगी?"

"हां, तभी तो आपको ढूंढ़ निकाला!" सतीश जोर से ठहाका लगाता बोला।

"आप कहां ठहरे हैं?"

"रामगढ़ में।"

सुमन को वह दोराहा याद आया, जहां से एक रास्ता भीमताल को जाता था और दूसरा रामगढ़-मुक्तेश्वर को मुड़ता था।

उसने पूछा—'तो क्या यहां से आप रामगढ़ जाएंगे?"

"भुवाली में अगर आपने रुकने की इजाजत न दी तो जाना ही पड़ेगा।"

सुमन लजा गई। दूसरा किनारा आ पहुँचा। नीचे उतरते हुए सतीश बोला—"भीमताल में सबसे प्यारी यही जगह है। चारों ओर जल, बीच में छोटा-सा टापू, कितना सुहावना लगता है!"

८

रेखा से रमेश ने पिकनिक पर चलने का आग्रह किया। बहुत सोच-विचार के बाद मुक्तेश्वर चलने का प्रोग्राम बना।

रेखा अपनी गाड़ी ले जाना चाहती थी, मगर ड्राइवर ने रोडवेज वालों से पूछकर बताया, रामगढ़ से आगे सड़क ठीक नहीं है। बस में सफर करने को रेखा तैयार न थी। अन्त में टैक्सी से चलने का प्रोग्राम बना। रोडवेज से टैक्सी मिल गई।

रमेश किसी और को साथ ले जाने के पक्ष में न था। मगर जोसेफ जोंक की तरह पीछे लगा हुआ। रेखा बड़ी उलझन में पड़ गई। वह एकांत तो चाहती थी, मगर जोसेफ को रुष्ट भी नहीं करना चाहती थी।

रमेश झुंझलाता बोला—"दो नाव पर पांव नहीं रखा जा सकता।"

'मुझे क्या, लीव हिम!'

दूसरे दिन सुबह रमेश के साथ रेखा पिकनिक पर चल दी।

भुवाली में गाड़ी रोकवाकर रेखा ने बहुत सारे फल खरीदे। भुवाली समुद्र की सतह से केवल ४५०० फुट ऊपर बसा हुआ था। सैनिटोरियम के कारण इसकी विशेष प्रसिद्धि है।

भुवाली से टैक्सी रामगढ़ के लिए रवाना हुई। निरन्तर ऊंचाई पर चढ़ती चली जा रही थी। रेखा बोली—"इतनी बार मैं नैनीताल आई, मगर मुक्तेश्वर कभी नहीं गई।"

"भीमताल, रानीखेत वगैरह तो घूम लिया होगा?" रमेश ने जिज्ञासा की।

"हाँ, मैं अल्मोड़ा वगैरह सब घूम चुकी हूं।"

"नैनीताल तो भुवाली से डेढ़-दो हजार फुट ऊपर बसा है।' रमेश बोला।

"रामगढ़?"

टैक्सी ड्राइवर बोला—"७२०० फुट ऊपर है।"

रमेश ने बताया—मुक्तेश्वर समुद्र की सतह से ८२०० फुट ऊपर बसा है।"

"अरे इतनी ऊंचाई पर!" रेखा साश्चर्य बोली—"पहले क्यों नहीं बताया, वहां दो-चार दिन रुकने का प्रोग्राम बनाती।"

"तो अभी क्या विगड़ा है। वहां रुक जाना।"

"मैं विस्तर, कपड़े वगैरह तो लाई नहीं।"

"सव इन्तजाम हो जाएगा। वहां बहुत अच्छा एक डाक-बंगला है। भारत सरकार का जानवरों की दवा के रिसर्च के लिए बहुत वड़ा इण्डियन वेटरनरी रिसर्च इन्स्टीट्यूट है। वहां दो-चार भले लोग भी रहते होंगे। कहीं से उधार विस्तर ले लेंगे।"

"और कपड़े ?"

"जाड़े के ऊनी कपड़े तो रोज फैशन के लिए ही बदले जाते हैं। फिर मुक्तेश्वर कोई मसूरी जैसी फैशनेबुल जगह तो नहीं है। यही चल जाएंगे।"

रेखा ने पूछा – 'वहां टेलीफोन तो होगा ?"

"जरूर होगा।"

प्रसन्नता से रेखा बोली – "वहां से ट्रंक-काल कर होटल-मैनेजर को कह देंगे, वह आया या ड्राइवर के हाथ मेरे कपड़े व विस्तर अगली बस से भेजवा देगा। शाम तक कपड़े वहां पहुँच जाएंगे ?"

'मेरा वहाँ कौन नौकर बैठा है ?"

"क्यों जोसेफ जो है।" रेखा बोली।

रमेश हँसी न रोक सका। धीरे से बोला—"उसके सामने मत कह देना।'

कुछ देर चुप रहने के बाद बोला—"ताली मेरे पास है, नहीं तो उसे रिंग कर लेता।"

"खुद ही तो कहते थे, उसे साथ न ले चलो, बोर करेगा। अब उसकी याद सता रही है।" रेखा ने ताना दिया।

'बोर करवाने के लिए ही तो आया को बुला रही हो न !"

रेखा उसका इशारा समझ मुस्करा दी।

मुक्तेश्वर साढ़े बारह बजे वे लोग पहुँचे।

डाक-बंगले में एक हिस्से में कोई परिवार ठहरा हुआ था। छोटे बच्चे बाहर खेल रहे थे। दूसरे हिस्से में ताला बन्द था।

रेखा बरामदे में खड़ी हो गई। रमेश चौकीदार का पता लगाने चला गया।

बच्चे मुस्कराते हुए उसकी टांगों से आ लिपटे—"आण्टीजी, अन्दर चलो।"

बच्चों की मां भी बाहर निकल आई। उसने नमस्कार कर बताया—"चौकीदार वह सामने छोटे क्वार्टरों के पास रहता है।"

"उधर गए हैं, पता लगा लेंगे।"

"आइए, अन्दर बैठिए।'

रेखा निमंत्रण अस्वीकार न कर सकी। कमरा डाकबंगले का था, मगर घर के ड्राइंग रूम जैसा सजा रखा था। टेबुल पर मिलेटरी के यूनिफार्म में एक फोटो फ्रेम में जड़ी रखी हुई थी।

रेखा ने फोटो की ओर इशारा कर पूछा—"आपके पति हैं ?"

"जी हां।" मुस्कराते हुए महिला बोली—"अभी पाँच मिनट पहले ही तो खाना खाकर गए हैं। शाम को आपसे मिलवाऊँगी।"

"आप यहीं रहती हैं ?" रेखा ने पूछा।

"दिल्ली में रहती हूँ। पिछले एक महीने से यहाँ हूँ। बच्चों के स्कूल खुलने पर फिर वापस चली जाऊँगी।"

"बच्चों को यहीं किसी अच्छे स्कूल में क्यों नहीं भर्ती करा देतीं ?"

"इनका कुछ ठीक नहीं रहता। रोज ही ट्रांसफर्ड होते रहते हैं। दो साल जम्मू में रहे, फिर दो महीने रानीखेत और आजकल यहाँ हैं। सुनती हूँ, जल्दी ही आसाम जाना पड़ेगा।"

"आप लोगों की भी जिन्दगी खूब है। कैसे इतने दिन अकेले कटते हैं ?" रेखा ने जिज्ञासा की।

"बच्चे हैं तो समय हँस-रोकर कट जाता है, नहीं तो दिन पहाड़ जैसे लम्बे कटते ही न थे।" ठंडी सांस लेती वह बोली।

रमेश नेपाली चौकीदार को बुला लाया। उसने बंगले का कमरा खोल दिया।

कमरे में डबल बेड पड़े हुए थे। टेबुल पर एक बड़ा शीशा फ्रेम में जड़ा पड़ा था। दो कुर्सियाँ व एक स्टूल भी पड़ हुए थे। फर्श पर दरी बिछी हुई थी। अन्दर ही से बाथरूम व लैटरिन का रास्ता था।

चौकीदार बोला—'मैनेजर साहब से पर्ची लिखवा लीजिए, बिना उनकी इजाज़त के मैं किसी को कमरा नहीं दे सकता।''

रमेश ने कहा "उसकी तुम चिन्ता न करो, सब हो जाएगा।"

"आपका बिस्तर वगैरह किधर है?"

"सब आ जाता है।"

रेखा किसी तरह उससे क्षमा माँगकर इधर आई। वह काफी के लिए बहुत आग्रह कर रही थी। रेखा ने शाम को काफी पीने का आश्वासन दिया।

इस वक्त उसे बहुत जोर से भूख लग रही थी। उसने टैक्सी से टिफिन का डिब्बा व प्लेटों की अटैची मंगवाई।

सब्जी ठंडी हो गई थी। वह बगल में जाकर उसे स्टोव पर गर्म कर लाई। पड़ोसन ने अपने नौकर से पानी-भरा शीशे का जग व गिलास ही नहीं, एक प्लेट में दो-तीन तरह के अचार भी भेजवा दिए।

खाना खाकर दोनों बाहर घूमने निकले।

रमेश ने बताया -- "अभी इस्टेट मैनेजर से परमिशन भी लेनी है।"

"कैसी?"

'डाकबंगले में ठहरने की।"

"चलो, पहले उधर हो लिया जाए।"

बड़ी कठिनाई से दो दिन की परमिशन मिली। बिना रमेश से पूछे उन्होंने रजिस्टर पर मिस्टर एण्ड मिसेज रमेशकुमार लिख लिया।

चाहकर भी वे आपत्ति न कर सके। आपत्ति करते तो शायद ठहरने की इजाजत ही नहीं मिलती। दो नौजवान स्त्री-पुरुष एक कमरे में कैसे ठहर सकते हैं?…

घूमते-घूमते दोनों बहुत दूर निकल गए। एक ऊंची चट्टान पर थककर दोनों बैठ गए। नीचे देखने पर चक्कर आता था। अद्भुत छवि थी।

रेखा बोली—"घटनाएं घटतीं नहीं, शायद उनका अस्तित्व ही पहले से बना-बनाया रहता है!"

"तभी न यहां पिकनिक के मूड में आए थे और ठहरने का प्रोग्राम बन गया!" रमेश के मुंह से अनायास निकल पड़ा।

"यहां अभी दिन में इतनी सर्द हवा चल रही है, रात में तो बर्फीला तूफान ही चलता होगा!"

"हां, यहां मार्च तक बर्फ मिलेगी। नैनीताल व रानीखेत की अपेक्षा यहां बहुत ज्यादा सर्दी पड़ती है।"

"तभी न बिना बिस्तर के रात काटने का प्रोग्राम बनाया है?" रेखा बोली।

"अगर किसी से उधार बिस्तर मांगा भी जाए तो वह पति-पत्नी के लिए एक ही बिस्तर देगा।" रमेश ने व्यंग्य किया।

"पति बनने का बहुत शौक है क्या?"

"अगर आप जैसी वाइफ मिले तो पति बनने में क्या एतराज हो सकता है।" रमेश ने चट उत्तर दिया।

रेखा शर्मा गई।

दोनों उसी प्रकार घंटों वहां बैठे प्यार-भरी बातें करते रहे। सूरज पहाड़ियों के पीछे छिपने लगा था। शाम का धुंधलका छाने लगा था।

रमेश ने टोका—यहीं बैठी रहोगी या चलना भी है!"

रेखा ने उठते हुए कहा—"अरे, वह बेचारी काफी लिए बैठी इंतजार

करती होगी।"

"कौन ?"

"वही, डाकबंगले की पड़ोसिन।"

दोनों तेजी से कदम बढ़ाते चल पड़े।

मिस्टर एण्ड मिसेज अग्रवाल उनकी प्रतीक्षा बहुत देर से कर रहे थे। एक-दूसरे से परिचय प्राप्त कर व परस्पर अभिवादन कर वे बैठ गए। बच्चे नौकर के साथ बाहर घूमने गए थे।

मिसेज अग्रवाल के कानों में ये शब्द अभी तक गूंज रहे थे—'माई फ्रेंड, मिस्टर रमेश इन्जीनियर...'

"फ्रेंड !"

तभी रमेश बोला—"आपको एक तकलीफ और देनी है। आपके पास कोई बिस्तर स्पेयर होगा...। जल्दी में लाना ही भूल गए।"

रेखा ने टोका—"साफ क्यों नहीं कहते कि पिकनिक के मूड में नैनीताल से निकले थे, मगर यहां पहुँचकर इरादा बदल गया।"

कैप्टेन अग्रवाल ने रमेश का ठहाका लगाने में साथ दिया। कैप्टेन भी लन्दन वगैरह घूम आए थे। दोनों आपस में विदेशों की चर्चा करने लगे।

रेखा चुपचाप काफी पी रही थी। मिसेज अग्रवाल के दिमाग में एक ही प्रश्न उबल रहा था। 'नौजवान रेखा और रमेश डाक-बंगले के एकांत कमरे में एकसाथ कैसे रहेंगे ?...कैसे माता-पिता हैं जो लड़कियों को इतनी स्वतंत्रता दे देते हैं !

'कहती है—'यहां पहुँचकर इरादा बदल गया।'....

'सबेरे तक न जाने कितने इरादे बने व बदलेंगे। यह भी खूब बात हुई !'

रेखा ने खामोशी तोड़ने के लिए पूछा—"आपका यहां मन लग जाता है ?"

"हां, रोज ही आप जैसे कोई न कोई दिलचस्प यात्री आते ही रहते हैं। उन्हें देख-सुनकर जी बहल ही जाता है।" मिसेज अग्रवाल कुटिल हंसी हंसती बोलीं।

रेखा ने व्यंग्य समझा। तुरन्त उत्तर दिया—"आपको देखकर हमारा भी दिल लग गया, नहीं तो अकेले बोर होते।"

"आपके मूड से तो ऐसा नहीं लगता।" वे जोर से हंस पड़ीं

रेखा झेंप-सी गई।

उन्होंने पूछा - "आप यहां के मन्दिर में तो नहीं गई थीं ?"

"मन्दिर तो शादी के बाद ही जाना चाहिए।"

"क्यों ?" मिसेज अग्रवाल ने एक और तीर छोड़ा – "कुंवारी कन्या की छाया से देवता अपवित्र तो नहीं हो जाते !"

"देवता की प्रसन्नता के लिए सुहागिनें ही सर्मपित होती रहती हैं!…"

"पत्थर की मूरत ही केवल देवता नहीं होती। सुहागिनें अग्नि को साक्षी देकर जिस देवता के गले में वरमाला डालती हैं…उन्हींके प्रति आजीवन सर्मपित होती हैं!"

"शरीर की पूजा करना ही समर्पण का प्रमाण है क्या ?" रेखा ने पूछा।

मिसेज अग्रवाल भी पढ़ी-लिखी महिला थीं। उन्हें इस बौद्धिक शास्त्रार्थ में बड़ा आनन्द मिल रहा था। बोलीं—"शरीर ही तो सत्य है, बाकी सब मिथ्या है!"

"ठीक है, बिना सप्तपदी के शरीर भला कैसे पवित्र हो सकता है। जो पवित्र नहीं वह भला सत्य कैसे हो सकता है! मगर सत्य वह नहीं, जो किसी साक्षी की अपेक्षा करे। सत्य स्वयं पूर्ण होता है, उसे खंडित कर नहीं देखा जा सकता।" रेखा बोली।

"सत्य ही अग्नि-परीक्षा में सीता के समान पवित्र सिद्ध होती है!"

"वह सत्य नहीं जिसे अग्नि-परीक्षा देनी पड़े!" रेखा बोली।

"क्यों ?" श्रीमती अग्रवाल ने पूछा ।

तभी रमेश व अग्रवाल साहब का ध्यान इधर गया । बहस काफी गरमागरम हो रही थी । मिस्टर अग्रवाल ने ठंडा पानी डाला—"आप मेरी बीवी जरूर हैं, मगर बहुत आर्थोडाक्स ! महीने में दस उपवास रखती हैं । रोज गीता-रामायण भी उलट-पुलट लेती हैं । आई वंडर, दिल्ली यूनिवर्सिटी में पढ़कर भी ··इनपर कुछ असर क्यों नहीं पड़ा !"

"क्वीन एलिजाबेथ गिरजे में प्रार्थना के लिए जाती हैं तो क्या वे भी आर्थोडाक्स हुईं ?" मिसेज अग्रवाल ने पूछा ।

कैप्टेन – उनकी बात दूसरी है । शी इज हेड आफ द स्टेट, सभी तरह के लोग रहते हैं ··उनकी भावनाओं की इज्जत करनी ही पड़ती है !

रमेश ने श्रीमती अग्रवाल का साथ दिया—'मैं यह नहीं समझ सका । केवल गीता या रामायण पढ़ने से ही आदमी कैसे पुरातन-पंथी हो जाता है ! क्या प्रगतिशील कहलाने के लिए अपने इतिहास-संस्कृति व धर्मग्रन्थों की खिल्ली उड़ाना आवश्यक होता है !"

रेखा बोली—"प्राचीन ग्रन्थों को पढ़ना एक बात है और उन आदर्शों की दुहाई देना दूसरी बात है !"

"आदर्श कभी पुराने नहीं होते ।" श्रीमती अग्रवाल बोलीं ।

"अगर ऐसा है तो हर शंकालु पति अपनी पत्नी की रोज अग्नि-परीक्षा लिया करे !" रेखा बोली ।

"एक सीता के लिए रावण से युद्ध करने का जिन लोगों के पास नैतिक बल नहीं ··वे किस मुँह से अग्नि-परीक्षा ले सकते हैं ?" मिसेज़ अग्रवाल तनिक आवेश में कह बैठीं ।

"जिन्होंने लक्ष्मण-रेखा के अन्दर नारी को कैद कर रखा है, उन्हें हर कोई रावण ही नजर आता है । नारी को बंधनों में जकड़ना छोड़ दीजिए, वह स्वयं रावण को परास्त करने में समर्थ सिद्ध होगी ।" रेखा ने तर्क प्रस्तुत किया ।

"पहले मन के रावण को पराजित कर ले!" मिसेज अग्रवाल बोलीं—"सीता का अपहरण करने के लिए भी रावण ने वेश बदला, और आज भी रावण अनेक रूपों में नारी को छल-बल से पराजित करता है, उसका दिन-दहाड़े अपहरण करता है,... मगर आधुनिक सभ्यता इसे क्राइम नहीं समझती। कोई किसी क्लब में डांसर के रूप में, कोई ब्वाय-फ्रेंड के छद्म वेष में और कोई सहयात्री के रूप में...नारी को आकर्षित व प्रभावित करता है, फिर उसपर प्यार के डोरे डालता है!...उसको भोग लेने के बाद वह फिर अलग हो जाता है, मगर प्रताड़ित-पराजित नारी का अहं इसे अपनी भूल या पराजय न मानकर आधुनिक सभ्यता व प्रगति का वरदान मानकर सन्तोष कर लेती है।...क्षणिक सुख के लिए, पुराने आदर्शों की खिल्ली उड़ाना, नैतिक मानदंडों को पुराना बताकर तोड़ना और स्वच्छंद भोग की वकालत करना....कभी भी, किसी देश-समाज या नारी वर्ग के लिए मंगलजनक नहीं कहा जा सकता...।"

"हियर...हियर!" कैप्टेन ने तालियाँ बजाईं--"आपको शायद नहीं मालूम, शी वाज ए गुड डिबेटर...यूनिवर्सिटी में डिबेट में बराबर फर्स्ट प्राइज यह विन करती रही!"

"वेरी गुड!" रमेश बोला।

रेखा चुप न रह सकी। उसे श्रीमती अग्रवाल के शब्द बाण की तरह तीखे लगे। वह बोली—"सन्तान की इच्छा से ही जिस समाज ने विवाह-प्रथा को जन्म दिया...वह नारी को सिवा भोग्या के दूसरे रूप में देख भी तो नहीं सकता! विवाह के नाम पर नारी पर मनमाना अत्याचार करो, उसके शरीर को बच्चा जनने की मशीन या खोखला ढाँचा-मात्र बना दो...यह सब अपराध नहीं, पुरुष का अधिकार हैं। विवाहित पुरुष भला रावण कैसे हो सकता है! भला पति भी पत्नी का अपहरण कर सकता है, उसपर अत्याचार कर सकता है, उसकी इच्छा के विरुद्ध उस-पर बलात्कार कर सकता है! तभी न पेनल कोड में भी इसे दंडनीय अपराध नहीं माना गया।...मगर एक कुंवारी लड़की अगर किसी अपरि-

चित पुरुष के साथ, भले ही अपनी इच्छा से किसी एकांत कमरे में एक रात रह जाए...तो यह घोर अनैतिकता है...इससे पूरा समाज कलंकित हो जाता है, देश के रसातल में जाने की संभावना बलवती हो जाती है, आखिर क्यों ? औरत को शीशे की नाजुक गुड़िया बनाकर ही तो आदर्शों की पूजा नहीं की जा सकती ! नारी पर केवल अविश्वास ही कर तो नैतिक मानदंडों को टूटने से बचाया नहीं जा सकता !...''

श्रीमती अग्रवाल ने जैसे ही उत्तर देने को मुँह खोला, कैप्टेन ने रोक दिया—"दैट इज आल फार टू-डे ! ...चलिए कहीं घूम आया जाए !"

"खाना कौन बनाएगा ?" श्रीमती अग्रवाल ने पूछा।

"बाजार में किसी होटल में खा लिया जाएगा !" रेखा ने प्रस्ताव किया।

"रामगढ़ के अच्छे होटल यहां नहीं मिलेंगे !" रमेश बोला।

रेखा को सुबह की घटना याद हो आई।

कैप्टेन का निमंत्रण उन्हें स्वीकार करना पड़ा। यही तय हुआ, कुछ देर घूमकर फिर वापस लौटकर घर खाना बने।

सब घूमने चल पड़े।

९

सुमन ने सतीश का निमंत्रण स्वीकार किया।

बस द्वारा दोनों एकसाथ अल्मोड़ा ज़ा पहुँचे।

बस-स्टेशन के पास ही एम्बैसडर होटल था। पांच रुपये रोज पर एक डबल बेड कमरा मिल गया।

सतीश ने सुमन का बिस्तर भी खोल दिया। अपने बिस्तर को ठीक करता बोला—"चाय मंगाई जाए !"

"चलेगी।"

चाय का आर्डर दिया।

सतीश कपड़े पहने-पहने ही बिस्तर पर लेट गया। बोला—"ट्रेन

में चाहे हजारों मील घूम लो, मगर वह थकावट नहीं आती जो बस के सफर में आ जाती है !"

"खासकर इन पहाड़ी सड़कों पर !"

चाय पीते हुए सतीश ने पूछा — "आपको अगर आपत्ति हो तो मैं अलग कमरा ले लूं !"

"बड़े शरीफ हैं आप !" सुमन बोली—"मेरी आपत्ति का विचार होता तो अपना बिस्तर न यहां खोलते !"

"बिस्तर गोल करने में कितना समय लगता है ?"

सुमन हंस पड़ी। सतीश बोला—"वैसे मैं आदमी जरूरत से ज्यादा शरीफ हूं। आप मुझपर विश्वास रख सकती हैं !"

' अगर ऐसी बात है तो बिस्तर गोल मत करिए।"

"धन्यवाद !" सतीश बोला।

"आज पिक्चर का मूड हो रहा है। यहां कोई हाल है या नहीं।"

"रास्ते में नहीं देखा था ? बहुत सारे पोस्टर लगे हुए थे। शायद आज ही से कोई नई पिक्चर लग रही है।"

"चलो यह भी अच्छा हुआ !" अंगड़ाई लेती सुमन बोली।

सतीश ने कपड़े बदले। उसने जब बनियान उतारी, गोरी मांसल भुजाएं व पुष्ट सीना चमक उठा। सूट वगैरह पहनकर वह तैयार हुआ, मगर सुमन चुपचाप बैठी एकटक उसे देखे चली जा रही थी। नाना प्रकार के अच्छे-बुरे विचार उसके दिल-दिमाग को मथे डाल रहे थे।

तभी सतीश ने टोका—"क्या बात है ? ऐसी ही चलोगी क्या ?"

"अगर कष्ट न हो तो बाहर बरामदे में जाकर खड़े हो जाएं; मैं भी चेन्ज कर लूं !" सुमन ने कहा।

"अगर यही न्याय है तो फिर आप बाहर क्यों नहीं गईं। क्या यह भी कोई शराफत है !… "

उठते हुए सुमन बोली—"गलती आपकी है। आपने टोका क्यों नहीं ?"

"इसीलिए कि मैं आपको शरीफ समझता हूँ !" मुस्कराते हुए सतीश ने कहा।

"शराफत का यही तकाजा है जब कोई औरत कपड़े बदलना चाहे तो भले आदमी को अपने-आप बाहर चले जाना चाहिए !"

"अच्छा मैडम, जाता हूँ !"

सतीश बाहर चला गया। सुमन ने अन्दर से किवाड़ बन्द किए। मुंह वगैरह वह पहले ही धो चुकी थी। उसने बाल वगैरह ठीक कर कपड़े बदले।

कपड़े बदलते वक्त उसे मां की याद आई। अगर मां किसी तरह यहां आ जाएँ और उसे एक अपरिचित के साथ इस प्रकार एक कमरे में रहता देख लें···! वह इस विचार-मात्र से कांप उठी।

···नहीं, यह पाप है ! एक कुंवारी लड़की के लिए अवांछनीय है। ···उसे सतीश के साथ रात इस एकांत कमरे में नहीं सोना चाहिए।····

वह तैयार होकर बाहर निकली। सतीश बरामदे में खड़ा, नीचे सड़क पर आने-जाने वालों को देख रहा था। सुमन बगल में जा खड़ी हुई। सतीश ने उसका नीचे से ऊपर गौर से निरीक्षण किया, फिर बोला—"आज बिजली कहां गिरेगी ?"

सुमन खिल गई—"जहां बादल बरसेंगे !"

दोनों बाहर निकले। एक ही सीधी सड़क थी, जिसे मालरोड कहा जाता है। सतीश बोला—"सभी हिल स्टेशन पर मालरोड जरूर मिलेगी।"

सामने से एक मुस्कराता जोड़ा हाथों में हाथ डाले, झूमता-सा चला आ रहा था। सुमन गौर से उन्हें देख रही थी। मांग में सिन्दूर चमक रहा था। सुमन सोचने लगी—'बिना मांग में सिन्दूर डाले क्या नारी किसी पुरुष के हाथ में हाथ डाले खुली सड़क पर स्वतंत्रतापूर्वक नहीं घूम सकती !···'

सतीश ने उसका हाथ पकड़ा। उसने विरोध नहीं किया। दोनों ओर छोटी-बड़ी दुकानें सजी हुई थीं। वे दुकानों का निरीक्षण करते चले जा रहे थे।

जब क़भी सामने से कोई सुन्दर लड़की या अच्छा जोड़ा गुजरता, सतीश उसका हाथ जोर से दबा देता। रास्ते में एक छोटा-सा पार्क पड़ा। दोनों उसके अन्दर चले गए। वहां से अल्मोड़ा के नीचे बसे छोटे गाँवों का बड़ा अच्छा व्यू मिलता था।

सुमन ने कहा—"हाथ छोड़ेंगे भी या पकड़े रहेंगे !"

"छोड़ने के लिए थोड़े हाथ पकड़ा था ?"

"सच !" सुमन की आंखें मुंद गईं।

"लोग विवाह के बाद प्रेम करते हैं। अगर प्रेम असफल होता है, तो भी विवाह स्त्री-पुरुष को बंधनों में जकड़े रहता है। उनका जीवन एक करुण ट्रेजेडी बनकर रह जाता है।" सतीश कहता चला गया—"विवाह को प्रेम करने का परमिट मात्र बना दिया गया है। जैसे प्रेम करने का अधिकार स्त्री-पुरुष को विवाह का लाइसेंस लेने के बाद ही हो। यह गलत चीज है। विवाह तो अन्तिम सीढ़ी है। पहले प्यार, एक-दूसरे को जानने-पहचानने का पर्याप्त अवसर, साहचर्य आदि का उन्मुक्त वातावरण होना चाहिए तभी विवाह उचित-अनुचित समझा जा सकता है। मगर यहां तो प्रारम्भ ही उल्टा है। दो अपरिचित लोगों को अग्नि की साक्षी देकर विवाह के सूत्र में पहले जकड़ देना, फिर उपदेश देना कि सुखी दाम्पत्य-जीवन के लिए, स्त्री-पुरुष को एक-दूसरे से प्यार करना चाहिए ! इसीलिए प्रायः विवाह असफल सिद्ध होते हैं !"

सुमन मन ही मन सतीश के विचार जानकर प्रसन्न हुई, मगर केवल दिखावटी विरोध के लिए बोली—"आप तो उन्मुक्त भोग की वकालत कर रहे हैं। अगर प्यार व साहचर्य का खुला परमिट बांट दिया जाए तो चारों ओर दुराचार व अनाचार फैल जाएगा।"

"क्या समाज में आज कम पापाचार है !" सतीश बोला—"यह बात दूसरी है, घूंघट की ओट में चलने वाला दुराचार लोग देखकर भी झूठी सामाजिक प्रतिष्ठा व कुलीनता के नाम पर अनदेखा कर जाते हैं।....मैं कहता हूँ, अगर आज लड़के-लड़कियों को थोड़ी स्वतन्त्रता दे दी

जाए तो शायद दहेज का कहीं नाम-निशान देखने को न मिलेगा। दहेज भी रिश्वत का एक रूप है।"

धीरे-धीरे पार्क में काफी भीड़ जमा हो गई। सुमन बोली—"चलना चाहिए, पिक्चर का टाइम हो गया है।"

"अरे बातों में तो मैं भूल ही गया था।" सतीश बोला—"लेकिन सेकेण्ड शो भी तो देखा जा सकता है!"

"मैंने तो जिन्दगी में कभी नहीं देखा। वह भी कोई टाइम है पिक्चर का।" सुमन बोली—"फिर यह अल्मोड़ा है, रात में ठिठुरकर अकड़ जाएँगे!"

सिनेमा-हाल आ गया। नाम पढ़ते हुए सुमन बोली—"नाम तो बड़ा अच्छा है, रीगल!"

"पिक्चर देखो कैसी निकलती है?" सतीश बोला।

न्यूज रील चल रही थी। दोनों बालकनी में जाकर बैठे। हाल में अँधेरा हो चुका था। कुर्सी पर बैठकर दोनों ने आश्चर्य से देखा—सभी कुर्सियाँ खाली पड़ी थीं।

"क्या बात है? पहला दिन और हाल खाली है!"

'यह कोई नैनीताल थोड़े है।"

दोनों पिक्चर देखने में तल्लीन हो गए। इण्टरवल हुआ। नीचे बड़ा शोर मच रहा था।

सतीश ने ऊपर से झाँककर देखा। नीचे हाल फुल था। दो-तीन पहाड़ी शराब पीकर गुल-गपाड़ा मचाए हुए थे, गेट-कीपर उन्हें बाहर निकालना चाहते थे, मगर वे हाथापाई करने लगे। कुछ देर में पुलिस आ गई।

सतीश ने चाय का आर्डर दे दिया था। चाय आई। उसने चायवाले छोकरे से पूछा—"शराबियों को हाल में घुसने क्यों देते हैं!"

छोकरा हँसते हुए बोला—"बाबू, यहां ठर्रा बहुत बनता और बिकता है। यहां बीड़ी व ठर्रा सब पीते हैं। मज़दूर लोग तो सारी कमाई इसी में खर्च कर देते हैं। अगर दारू पीनेवालों को टिकट न बेचें तो दो दिन में हाल बन्द हो जाए।"

चाय देकर छोकरा गया नहीं, खड़ा रहा। फिर खुद ही बोला—"शराब पीना बुरा नहीं, मगर बहकना तो ठीक नहीं। हम भी पीते हैं, मगर क्या मज़ाल जो ग्राहक को महक भी आ जाए!"

"अच्छा!" और सुमन हंस पड़ी।

सतीश ने देखा, पन्द्रह-सोलह वर्ष का सूखा हुआ छोकरा था। यह उम्र और शराब?

हाल की बत्तियां बुझीं और खेल शुरू हो गया। काफी लम्बी पिक्चर थी। सुमन ऊब उठी—"कब खत्म होगी? न जाने क्यों इतना लम्बा कहानी को खींचते हैं। इसका अन्त तो साफ है, केवल सस्पेंस के लिए खून करवा दिया। अब कचहरी का दृश्य आएगा, वकीलों का अभिनय होगा, शोर मचेगा, जज साहब दो-तीन बार आर्डर-आर्डर कहेंगे, फिर जूरी की राय मांगेंगे। अन्त में फांसी की सज़ा सुनाई जाएगी। मगर फिर भी कभी हीरो को फांसी पर नहीं लटकाया जाता। कोई अनोखी घटना घटेगी और असली खूनी पकड़ा जाएगा। जज साहब फैसला बदल देंगे। हीरो छूटकर बाहर निकलेगा और प्रेमिका गले में बाँहें डालने को जेल के फाटक पर खड़ी मिलेगी।"

सतीश हंसा—"यह पिक्चर लगता है पहले देख चुकी हो!"

"नहीं तो!" सुमन ने सफाई दी—"आजकल सभी पिक्चर की कहानी एक जैसी मिलेगी। लगता है निर्माताओं के पास जैसे विषय का अकाल हो!"

और सचमुच पिक्चर का वही अन्त हुआ। रात साढ़े नौ बजे पिक्चर समाप्त हुई। सड़क पर एकदम सन्नाटा छाया हुआ था। ठंडी हवा चल रही थी।

बाहर कोई रिक्शा न था। सुमन बोली—"नैनीताल में रिक्शे तो मिल जाते हैं यहां तो उनका भी अकाल है!"

"रूट मार्च करो, गर्मी आ जाएगी!" तेजी से चलते हुए सतीश बोला।

सुमन भी कदम से कदम मिलाती चलती गई। इस वक्त पहाड़ की ढलानों पर रोशनी के मुस्कराते फूल बड़े आकर्षक प्रतीत हो रहे थे।

होटल पहुँचकर दोनों ने पहले खाना खाया।

कमरे में पहुँचकर सतीश ने स्लीपिंग सूट पहना और स्वयं बाहर बरामदे में जाकर खड़ा हो गया। दरवाजा बन्द करती सुमन बोली—"इसीका नाम शराफत है!"

"मेम साहब, कहीं शराफत के नाम पर सारी रात बाहर बरामदे में खड़े रहनें की सजा मत दे दीजिएगा।" सतीश बोला।

सुमन कपड़े बदलती सोच रही थी, उसका सतीश से अचानक कैसे परिचय हुआ, फिर भुवाली में अक्सर सुबह-शाम भेंट हो जाती। धीरे-धीरे वही संक्षिप्त परिचय घनिष्ठता में परिवर्तित होता गया। और आज?

···उसे भुवाली की वह शाम याद आई जब उस पहाड़ी पर वह अकेली खड़ी थी!···वह दृश्य, पहाड़ी की गोद में जवान मांसल औरत···वह कितनी ज्यादा नर्वस हो गई थी!

मन अजीब उलझन में था। वह कोई निर्णय नहीं कर पा रही थी। उसे लगा, संसार में पाप-पुण्य कुछ भी नहीं···जो घट रहा है, वही सत्य है। जो सत्य है, यथार्थ है, वह झूठ कैसे हो सकता है! उसने अनुभव किया, उसकी छोटी-सी नौका बिना पतवार के जलधार के बीच बही जा रही है। लहरों के भरोसे उसने किश्ती को छोड़ दिया है, चाहे डुबा दे···या किनारे लगा दे।

सतीश ने दरवाजा खटखटाया। वह कपड़े बदल चुकी थी। उसने दरवाजा खोल दिया।

वह अपने बिस्तर में जाकर लेट गई।

सतीश ने पूछा—"आप लाइट जलाकर सोती हैं या बुझाकर!"

"प्रकाश किसे अच्छा नहीं लगता!"

"अच्छा, तो फिर जलने दो!"

सतीश ने अन्दर से दरवाजा बन्द किया और अपने बिस्तर में जाकर लेट गया।

सुमन ने कहा—"गुड नाइट!"

"गुड नाइट!"

दोनों करवट बदलकर लिहाफ में छिप गए।

टन्-टन्!

घड़ी ने बारह बजाए।

एक बजा, दो…फिर तीन!

मगर सुमन की आंखों से जैसे नींद ही उड़ गई थी। उसकी दोनों आखें बुरी तरह जल रही थीं। सतीश पड़ा खर्राटे भर रहा था।

सुमन समझ नहीं पा रही थी, यह कैसी कमजोरी है। वह इतनी बेचैन क्यों है?…

उसने अनुभव किया, वह अपने को संभाल नहीं पा रही है। उठी। लाइट बन्द कर दी।

सतीश के पलंग के पास कुछ देर खड़ी रही। मगर बहुत देर खड़ी न रह सकी, लातें कांप रही थीं।…

वह खड़ी न रह सकी, टूटकर उसके ऊपर गिर पड़ी।

सतीश हड़बड़ाकर उठा।

मगर वहां तो सिर्फ अन्धेरा था…सब ओर घोर अन्धकार!!

१०

रेखा बिस्तर पर लेटती बोली—"आज खाने में मजा आ गया। मिसेज अग्रवाल खाना अच्छा बना लेती हैं।"

रमेश जम्हाई लेता बोला—"मुझे तो मिस्टर अग्रवाल बड़े दिलचस्प आदमी लगे। सचमुच मिलेट्री-आफिसर की स्पिरिट ही रंगीली होती है।"

रेखा करवट बदलती बोली—"यहीं सोने का इरादा है क्या ?"

"जैसी आज्ञा हो।"

"मुझे तो कुछ फर्क नहीं पड़ता, मगर बेचारी मिसेज अग्रवाल रात-भर सो नहीं पाएँगी।" रेखा बोली।

"तो फिर ऐसा करें, मैं मिस्टर अग्रवाल के पास उधर सो जाता हूं और मिसेज़ अग्रवाल को इधर तुम्हारे पास भेज देता हूँ।" रमेश ने सुझाव दिया।

रेखा को सुझाव पसन्द आया।

रमेश बगल में जाकर कैप्टेन से बोला—"अगर आपको आपत्ति न हो तो मैं इधर आपके पास ही सो जाऊँ। मिसेज़ अग्रवाल की कम्पनी में मिस रेखा की रात अच्छी कट जाएगी।"

मिसेज़ अग्रवाल बोलीं—"लगता है मेरी बातों का वे बुरा मान गईं। आई एम सो सारी !····आपकी कम्पनी के लिए ही वे नैनीताल से मुक्तेश्वर तक आईं··· फिर आप उन्हें क्यों बोर करना चाहते हैं !"

रमेश ने फौरन उत्तर दिया—"कम्पनी का अर्थ केवल साथ सोना ही नहीं होता !"

मिस्टर अग्रवाल के कहने पर मिसेज़ अग्रवाल रेखा के कमरे में चली गईं।

रेखा ने स्वागत करते हुए कहा—"मुझे विश्वास है, आप एक रात के लिए मिस्टर अग्रवाल से अलग रह सकती हैं।"

"बच्चों की मां से यह प्रश्न करना ठीक नहीं।" वैठते हुए मिसेज़ अग्रवाल बोलीं—"जब तुम्हारे बच्चे होंगे तब जान सकोगी, मां की ममता क्या होती है ! मैं बच्चों के पास ही सोती हूँ।"

"अरे आप तो सफाई देनें लगीं—" रेखा बोली।

"मुझे यहां सोने में कोई आपत्ति तो नहीं है लेकिन रात में अगर कोई बच्चा उठ गया तो ज़रा परेशानी होगी।"

"फिर आप उधर बच्चों के पास ही सोएं।" रेखा बोली।

"आप भी उधर चलिए न!" मिसेज़ अग्रवाल बोलीं—"वे लोग इधर आ जाएंगे।"

रेखा को गर्म बिस्तर से उठने में तनिक आलस्य लगा। मगर फिर भी उठना ही पड़ा।

रात बड़ी ठंडी थी। सब दरवाजे बन्द थे, मगर फिर भी लिहाफ में रेखा ठिठुर रही थी। बातें करते-करते उसकी आँख लग गई।

दो दिन बाद, जब रेखा-रमेश मुक्तेश्वर से विदा होने लगे, उन्हें ऐसा लगा जैसे पीछे कोई अपना ही छूटा जा रहा हो। कैप्टेन अग्रवाल व उनकी पत्नी ने दोनों का इतना स्नेह-सत्कार किया कि विदा के क्षणों में उनका मन भारी हो उठा।

जोसेफ इनका बेसब्री से इन्तज़ार कर रहा था। उनके पहुँचते ही उसने उलाहना दिया—"अकेले पिकनिक पर चले गए, मुझे बताया भी नहीं!"

"प्रोग्राम एकाएक बना इसलिए आपको इन्फार्म न कर सके।" रमेश ने आश्वस्त किया।

दिन इसी प्रकार बीते जा रहे थे। सब ओर सिर्फ आनन्द व मस्ती थी। जोसेफ इन दोनों का सेक्रेटरी बन गया था। सुबह से रात तक का प्रोग्राम स्वयं बनाता। दोनों को एक क्षण भी बोर न होने देता।

एक शाम दोनों घूमते हुए ओक पार्क से भी आगे निकल गए। शाम घनी होती गई। अंधेरा पहाड़ों की ढलानों के ऊपर चढ़ता चला आ रहा था। दोनों थककर एक वृक्ष की छांह में बैठ गए।

रमेश ने रेखा का हाथ पकड़ा—"सिर्फ दस दिन और बचे हैं। मुझे लौटना ही होगा !'

"ऐसी भी क्या जल्दी है ? छुट्टी के लिए टेलीग्राम कर दो।" रेखा ने सुझाव दिया।

"बिना ज्वाइन किए भला छुट्टी कैसे मिल सकती है !" रमेश ने मजबूरी प्रकट की।

"डार्लिंग !" रेखा ने उसकी आंखों में झांकते हुए कहा।

अन्धेरा तेज़ी से डग भरता चला आ रहा था। बढ़ते-बढ़ते वह पहाड़ों की ऊंची चोटी पर भी पहुँच गया। अन्धेरे की काली चादर ने रेखा व रमेश को भी अपने आंचल में ढक लिया। शायद इसीलिए, आलिंगन-बद्ध रेखा-रमेश को उस वृक्ष पर बैठा पक्षियों का जोड़ा भी न देख सका।

उस रात रेखा को बड़ी मीठी नींद आई। वह मधुर स्वप्नों में खोई रही। सुबह बड़ी देर तक वह न उठी। आया का भी साहस उसे जगाने को न पड़ा।

सपने टूटते हैं। उसका भी सपना टूटा। रमेश ने उसे आकर उठाया। आंखें मलती वह उठ बैठी—"अरे इतना दिन निकल आया और मैं पड़ी सो रही थी !"

उसने देखा रमेश चुपचाप खड़ा है। रेखा ने हाथ पकड़कर उसे पास बैठाते कहा—"आज सुबह-सुबह मूड क्यों बिगड़ा हुआ है ?"

"मैं जा रहा हूँ !"

"कहां ?"

"वापस !"

"क्यों ?" रेखा को शॉक लगा।

रमेश ने टेलीग्राम आगे बढ़ाया।

रेखा ने पढ़ा—"पिता सख्त बीमार हैं, फौरन आओ !"

आखिर वह अब उसे कैसे रोक सकती थी। उसे जाना ही होगा। मगर उसका दिल न जाने क्यों धड़कने लगा। उसे आशंका हुई, शायद यह फिर कभी लौटकर यहां न आ सकेगा।

रेखा अधीर हो उठी—"डार्लिंग ! तुम मुझे भूल तो न जाओगे !"

रमेश की पलकों ने आश्वासन में कुछ मोती रेखा की झोली में डाल दिए।

रमेश रेखा को उदास अकेला छोड़कर चला गया।

रेखा को नैनीताल नीरस लगने लगा। वह जल्द से जल्द नैनीताल छोड़ देना चाहती थी।

जोसेफ ने मसूरी चलने का सुझाव दिया। मगर वहाँ तो कमल-कल्पना हनीमून के लिए गए हुए हैं।···

उसने रानीखेत जाने का निश्चय किया। जोसेफ भी साथ चल पड़ा।

अपनी कार से वह रानीखेत पहुँच गई। वहाँ वेस्ट व्यू होटल में दो कमरे लेकर ठहर गई। उसने टेलीफोन पर नैनीताल मोटल के मैनेजर को अपना पता नोट करा दिया। उससे डाक रानीखेत के पते पर री-डाइरेक्ट करने का आश्वासन मिल गया।

रानीखेत में नैनीताल की अपेक्षा काफी शान्ति थी। शाम को वह जोसेफ के साथ सदर बाज़ार घूमने चली जाती। यहां माल रोड पर विशेष चहल-पहल न रहती। मुख्य बाज़ार सदर का था। एक छोटा-सा सिनेमा हॉल ग्लोब थियेटर भी था। हर तीसरे दिन फिलम बदल जाती थी। कभी-कभी वह पिक्चर भी देखने चली जाती।

मगर रमेश के बिना उसे सब कुछ नीरस लगता। उसे दुःख और आश्चर्य इस बात का था कि इतने दिन हो गए···मगर रमेश ने उसे एक छोटा-सा पत्र भी नहीं भेजा।

पत्र के इन्तज़ार में ही दिन कटते जा रहे थे।

११

सतीश की सुबह जब आंख खुली, सुमन अस्त-व्यस्त पड़ी सो रही थी।

सतीश ने उठकर खिड़की खोल दी। चारों ओर घना कुहरा छाया हुआ था। सूरज की सतरंगी किरणें कुहरे के बादलों को चीर रही थीं।

...जो कुछ घटा, वह कितना आकस्मिक था ! सतीश ने कभी इसकी कल्पना भी न की थी। उसे लगा, एक तूफान उठा...जिसने सूखे पत्ते की तरह उसके सारे नैतिक व काल्पनिक आदर्शों को उड़ा दिया। कितना कमजोर है मनुष्य !

सुमन की ओर दृष्टि गई।

कौन है यह लड़की ? किस प्रकार अनायास वह उसके जीवन में धंसती चली गई ! उसने अनुभव किया, जो कुछ घट रहा है वह पूर्व-नियोजित था। वह तो रंगमंच का एक साधारण पात्र मात्र है। उसके हाथ में क्या है ? सूत्रधार के आदेशों की अवहेलना भला कैसे वह कर सकता है !...

यदि मनुष्य का अपनी भूमिका के निर्माण में कोई हाथ नहीं, वह मात्र एक अभिनेता है... स्रष्टा नहीं, तो फिर पाप-पुण्य का वह भागी क्यों होता है ? क्या संसार में पाप व पुण्य भी अभिनेता को उसकी इच्छा से प्राप्त नहीं होते, दर्शकों के दृष्टिकोण के आधार पर ही इनकी परिभाषाएँ व सीमाएँ घटती-बढ़ती व बदलती रहती हैं ! जिसे हमारे देश के चिन्तक-विचारक 'पाप' कहकर सम्बोधित करते हैं, जरूरी नहीं कि विदेशी चिन्तक उसी कर्म को पाप के रूप में स्वीकार करें ! जब देश-काल के अनुसार पाप-पुण्य की परिभाषा में अन्तर पड़ जाता है, तब संकीर्ण दृष्टिकोण से किसी कर्म को अच्छा या बुरा मानना कैसे उचित कहा जा सकता है !...

अगर प्यास लगी हो तो पानी का गिलास पीना स्वाभाविक ही कहा जाएगा। मगर दूसरे का गिलास उठाकर खुद पी लेना, चोरी भले ही समझ ली जाए···लेकिन पाप नहीं कहा जा सकता! ···

आलस्य भाव से सुमन उठ बैठी ''क्या टाइम हो रहा है?''

सतीश ने देखा, सुमन उससे आंख चुरा रही है। वह बोला—''दो-चार घंटे और सो लो, कहीं दफ्तर थोड़े ही जाना है!''

सुमन तकिये में मुंह छिपाकर लेट गई।

···वह अपना मुंह आखिर कैसे दिखाए? क्या सोचते होंगे सतीश बाबू। एक क्षण के आवेश में वह क्या कर बैठी? कल्पना-मात्र से वह पानी-पानी हो उठी।

सतीश बाथरूम जा चुका था। कुछ देर बाद वह उठी। शीशे में उसने अपनी सूरत देखी। बाल व कपड़े ठीक किए। उसे लगा, उसने सचमुच कोई बड़ा पाप किया है। मां की दो आंखें उसे घूरती दृष्टिगत हुईं। वह सर से पांव तक कांप उठी। '' सतीश आया। सुमन चरणों की ओर झुकी। सतीश ने हाथ पकड़कर रोका।

''मुझे माफ करना! मैंने बहुत बड़ा पाप किया है!'' वह बोली।

सुमन खड़ी न रह सकी। आंसुओं से भींगी आंखें तकिये से ढक ली। वह सिसकने लगी।

सतीश ने पास बैठकर सांत्वना देते हुए सर पर हाथ फेरा—''रोती हो पगली! जो हुआ उसे भूल जाओ।''

''स्त्री के लिए जो सबसे अधिक मूल्यवान है, उसे खोकर भी भूल जाऊं!'' सिसकती सुमन बोली—''नहीं, मैं पापिष्ठा हूं। मुझे जीने का कोई अधिकार नहीं। मैं मां को अपना कलंकित मुंह कैसे दिखाऊंगी!''

''मांग का सिन्दूर भी क्या तुम्हारा कलंक न धो सकेगा?'' सतीश ने प्रश्न किया।

सुमन ने डबडबाई आंखों से सतीश की ओर देखा। उसे अपने कान पर विश्वास न हुआ।

"अन्धेरे में जिसे वरा है, क्या उसे अग्नि की साक्षी देकर भी अपना सकोगी ?"

"सतीश बाबू ! कहीं मैं सपना तो नहीं देख रही हूँ। मुझे अपने कानों पर विश्वास नहीं होता !" उसने सतीश की गोद में सर डाल दिया।

उसके माथे पर अधरों से स्वीकृति की मोहर लगाते सतीश बोला—"जो कल तक सपना था, वही आज सत्य बनेगा !"

"मगर !" सुमन हिचकी।

"क्या ?"

"मां का आशीर्वाद भी तो लेना होगा !"

"वह तो बाद में भी प्राप्त हो सकता है !" सतीश बोला।

सुमन के दिल पर से एक भारी बोझ उतर गया।

स्नानादि से निवृत्त होकर व चाय पीकर सुमन घूमने निकली। सतीश ने दूसरी तरफ चलने का प्रस्ताव किया। बस-स्टेशन से आगे, नगरपालिका का कार्यालय था। उसके बगल से सीढ़ियाँ चढ़कर रास्ता बाज़ार में निकलता था। फल-सब्जी से लेकर हर प्रकार की छोटी-बड़ी दुकानें थीं। अल्मोड़े का यह मुख्य बाज़ार था। बाज़ार सीधा चला गया था।

एक दुकान के पास रुककर सतीश ने लाल चूड़ियाँ व सिन्दूर खरीदा।

कुछ दूर आगे बढ़ने पर एक मन्दिर मिला। दर्शनार्थ दोनों अन्दर गए। सतीश ने सुमन से चूड़ियाँ पहनने को कहा। फिर देवता के चरणों पर फूल अर्पित कर उसने सुमन की माँग में सिन्दूर भरा।

सुमन का हाथ पकड़कर देवता के समक्ष मस्तक झुकाकर बोला - "मैं तुम्हें साक्षी देकर, इसे अपनी पत्नी स्वीकार करता हूँ। हमें शक्ति दो जिससे एक दूसरे का विश्वास कभी खंडित न होने पाए।"

सुमन ने झुककर चरण-स्पर्श किया। सतीश ने आशीर्वाद में उसके सर पर हाथ रख दिया।

बाहर निकलते हुए सतीश बोला—"हमारा विवाह भी अविस्मरणीय रहेगा। न मुहूर्त, न पंडित, न बाजे, न बराती, न घोड़ा, न डोली···चट मंगनी और पट ब्याह !"

सतीश खिलखिलाकर हँस पड़ा। सुमन बोली—'दहेज भी आप लेना भूल गए !"

"वह कैसे भूल सकता हूँ ?"

"मेरी मां ने ज़रूर कुछ रुपये जोड़ रखे हैं। अगर वह इस सम्बन्ध से रुष्ट न हुई तो दहेज अवश्य देगी !" सुमन ने आश्वासन दिया।

"मगर, वह तो मैं पहले ही ले चुका हूँ !"

"क्या ?"

"तुम्हारा प्यार !" सतीश बोला—"इससे भी कीमती कोई दहेज हो सकता है क्या ?····वे कितने बदनसीब पति होते हैं, जिन्हें ससुराल से सोना-चाँदी, पलंग-कुर्सी, कपड़े-बिछावन सब मिल जाता है···मगर पत्नी का स्नेह नहीं मिल पाता। रेशमी गद्दों पर बैठी पत्नी के शरीर पर उनका आधिपत्य ज़रूर हो जाता है, मगर बिना मन के शरीर तो सदा निष्प्राण व निरर्थक ही रहता है।·· मैं औरत के प्यार को हीरे-जवाहरात व सोने-चाँदी से भी ज्यादा कीमती समझता हूँ !"

सुमन ने धीरे से हाथ दबाते हुए कहा—"बस-बस ! ज्यादा मत कहो, कहीं हमारे प्यार को नज़र न लग जाए।"

"इसीलिए तो कलाइयों में हथकड़ी की तरह लाल चूड़ियाँ पहना दी हैं और माँग में चमकता सिन्दूर भी नज़र न लगने देगा !"

सुमन को बड़ा अजीब-सा लग रहा था। कितनी जल्दी घटनाएँ घटती चली जा रही थीं !

कुछ दिन बाद सुमन ने प्रस्ताव किया—"रानीखेत भी देख लिया जाए। मुझे वापस कानपुर भी लौटना है। छुट्टियाँ खत्म होनेवाली हैं !"

"छुट्टियाँ तो अब शुरू हो रही हैं !"

"मैं समझी नहीं !"

"मिसेज़ सतीश कुमार को नौकरी करने की अब कोई ज़रूरत नहीं !" सतीश बोला।

"ठीक है, लेकिन विधवा मां का एकमात्र सहारा भी तो मैं ही हूँ।" सुमन ने अपना मंतव्य स्पष्ट किया।

"अब तुम अकेली कहां रहीं !" सतीश बोला—"उनकी चिन्ता मुझे भी करनी होगी।"

सुमन उत्तर में मुस्करा दी।

सतीश ने अपने घर शादी की खुशखबरी तार से भिजवा दी। सुमन ने पत्र लिखा—

"श्रद्धेय माताजी,

"सादर चरण-स्पर्श !

"मैं यहां कुशलता-पूर्वक हूँ। अब अल्मोड़े से भी जी ऊब गया। कल रानीखेत जा रही हूँ। बहुत जल्द तुम्हारे पास पहुँच जाऊंगी। हर क्षण तुम्हारी याद मन में चुभती रहती है।

"आज तुम्हें मैं एक खुशखबरी सुनाना चाहती हूँ। बताओ, तुम्हारे जीवन की सबसे बड़ी खुशखबरी क्या हो सकती है?···

"जिस बेटी से हाथ पीले करने के लिए तुम बरसों से रुपये पेट काट-काटकर जोड़ रही थीं, उसने खुद अपने हाथ पीले कर लिए। अगर तुम इस खबर से खुश न हो सको, तो भी नाराज न होना !

"कितनी भाग्यवान हो तुम, तुम्हें अपने दामाद के स्वागत के लिए, एक दीप भी न जलाना पड़ा ! विना चांदी के तराजू पर तुम्हारी बेटी को तौले, उसने सहर्ष स्वयं देवता को साक्षी देकर, पत्नी-रूप में मुझे स्वीकार कर लिया।

"तुम्हारा आशीर्वाद हमें मिलेगा इसी विश्वास पर हमने इतना बड़ा साहस किया। आशा है, तुम हमारा विश्वास खंडित न होने दोगी।

तुम्हारी बेटी,
सुमन"

१२

रानीखेत को बस चल पड़ी।

अल्मोड़ा पीछे छूटता चला जा रहा था। बस पहाड़ी ढलानों पर उतरती जा रहीं थी।

सुमन सोच रही थी, 'उसने कभी कल्पना भी न की थी कि अल्मोड़े में वह किसी को पति रूप में ग्रहण करेगी। उसकी बगल में बैठा यह स्वस्थ नवयुवक कोई दूसरा नहीं, मात्र सहयात्री ही नहीं⋯ बल्कि उसका जीवन-साथी है !'

पास वैठे दो सहयात्री वातें कर रहे थे—"पहले गर्मियों में पहाड़ों पर अंग्रेज व थोड़े-से हिन्दुस्तानी सरकारी अफसर व बड़ सेठ तथा राजा-महाराजा ही आया करते थे।⋯आजादी के बाद तो जिसे देखो, पंहाड़ घूमने चला आ रहा है। भीड़-भाड़ ने पहाड़ों को कितना सस्ता व गन्दा बना दिया !⋯"

"यह क्यों भूलते हैं; यह जनतंत्र है।" दूसरे सज्जन तनिक आवेश में आ गए—"अगर भारतीय जनता इन पहाड़ों पर सैर को न आया

करती तो अंग्रेजों के जाने के बाद, इन पहाड़ों पर सूनापन छा जाता।"

"अगर ऐसा है तो फिर लोग क्यों चिल्लाते हैं देश में गरीबी है!"

"पहाड़ पर आने-मात्र से कोई अमीर नहीं हो जाता!"

"क्यों नहीं!" पहले सज्जन बहुत अधिक जोश में आ गए—

"जिसके घर में चूल्हा नहीं जलता होगा, वह पहाड़ों पर ठंडी हवा लेने नहीं आएगा!"...

सतीश ने चुप्पी तोड़ी—"रानीखेत में कब तक रुकने का इरादा है?"

"अगर इरादे के अनुसार प्रोग्राम बनते होते तो शायद हमारा इतनी जल्दी विवाह न हो पाता!"

"मैं समझा नहीं!" सतीश बोला।

"भुवाली से जब अल्मोड़ा के लिए प्रस्थान किया, तब मेरा आपसे विवाह करने का कोई इरादा न था। मगर फिर भी विवाह हो गया!" सुमन ने हंसते हुए धीरे से समझाया।

सतीश को भी हंसी आ गई।

कोसी में बस रुकी। लोग पानी पीने नीचे उतरे। वहाँ बालक-मिठाई की तीन-चार दुकानें थीं। सुमन को प्यास लगी थी। वह सतीश के साथ नीचे उतरी।

सतीश ने दुकानदार से पूछा—"बालक-मिठाई क्या सिर्फ बालकों के लिए है?"

"नहीं, नहीं, आप भी खा सकते हैं!" दुकानदार हंसता हुआ बोला।

"क्या ये अभी तक बालक हैं?" सुमन ने व्यंग्य किया।

वहाँ उपस्थित सभी खिलखिला उठे।

खोये के लाल पेड़े व लड्डू पर रेवड़ियों के ऊपर लगाए जानेवाले तिल लगे हुए थे। मिठाई स्वादिष्ट थी। पानी पीकर वापस बस में आकर दोनों बैठ गए।

बस चल पड़ी।

अल्मोड़े से कोसी तक बस बराबर नीचे उतरती चली आ रही थी, ढलानों पर फिसलती हुई। अब चढ़ाई शुरू हो रही थी। बस सड़कों की चक्करदार सीढ़ियों के सहारे ऊपर पहाड़ की चोटी पर चढ़ती चली जा रही थी।

सतीश बोला—'कुछ देखा तुमने!'
'क्या?"

"मनुष्य को ऊपर उठने के लिए पहले नीचे झुकना पड़ता है। एक-एक सीढ़ी चढ़कर ही हम जीवन में सफलता के उच्चतम शिखर पर पहुँच सकते हैं।" सतीश बोला—"बस को ही देखो। एक पहाड़ से दूसरे पहाड़ की चोटी पर चढ़ने के लिए...उसे पहले नीचे उतरना पड़ता है। अगर कोई एक शिखर से दूसरे शिखर तक छलांग लगाकर पहुँचना चाहे तो नीचे गिरने की संभावना अधिक रहती है!"

"मगर मैं कुछ और ही सोच रही थी!"
"क्या?"

"अगर पहाड़ों के शिखर आपस में एक-दूसरे से पुलों द्वारा जोड़ दिए जाते तो यात्रा में बहुत कम समय लगता!" सुमन बोली—"यह बात ठीक है कि मनुष्य को सीढ़ी पर एक-एक कर चढ़ना चाहिए। मगर आज के स्पुतनिक-युग में अगर कोई सीढ़ियाँ ही नापता रहा तो वह शिखर पर कभी न पहुँच पाएगा।"

"फिर बस से यात्रा करने की आवश्यकता ही क्या? हवाई जहाज़ से एक शिखर से दूसरे शिखर पर क्यों न पहुँच जाएं!" सतीश बोला।

"यही तो मैं भी सोचती हूँ !" सुमन बोली—"हर वर्ष समाचार-पत्रों में एवरेस्ट-अभियान के समाचार पढ़ती हूँ। आखिर मनुष्य का जीवन क्या इतना सस्ता है कि उसे बर्फ के तूफानों से संघर्ष कर, रस्सों के सहारे ही एवरेस्ट की चोटी पर पहुँचने के लिए उत्साहित किया जाए ? क्या हवाई जहाज़ से छतरी के सहारे उस उच्च शिखर पर सीधे नहीं उतरा जा सकता ?"

"ठीक है !" सतीश बोला—"लेकिन हिलारी व तेनसिंह को जो स्वाभाविक प्रसन्नता प्राप्त हुई वह क्या पैराशूट से उस शिखर पर उतर-कर किसी को प्राप्त हो सकती थी !"

"अगर ऐसा है तो फिर स्पुतनिक में बैठकर पृथ्वी की प्रदक्षिणा करनेवाले गगारिन को प्रसन्न नहीं होना चाहिए।" सुमन ने तर्क प्रस्तुत किया।

"तुम अन्तरिक्ष-यात्री की तुलना थलचर जीव से कर रही हो !"

"मनुष्य ही आज थलचर भी है और नभचर भी।" सुमन बोली—"गगारिन भी साधारण मनुष्यों की तरह खाता-पीता व चलता-फिरता होगा। मनुष्य चन्द्रलोक में भी पहुंचकर मात्र मनुष्य ही रहेगा…देवता नहीं बन जाएगा !"

"तुम्हें वकील होना चाहिए।" सतीश ने बात बदलने के लिए कहा—"बहस अच्छी कर लेती हो !"

सुमन ने पूछा—"और आपको ?"

धीरे से सतीश कान में फुसफुसाया—"तुम्हारा मुंशी !"

सुमन ने धीरे से उसका हाथ दबा दिया।

रानीखेत आया। बस रुकी। टोल-टैक्स यात्रियों ने दिए। बस फिर आगे बढ़ी।

पहाड़ी पर रानीखेत बसा था, मगर चारों ओर समतल मैदान देखकर, सहज ही यह विश्वास नहीं होता था कि यह पहाड़ी प्रदेश है। सैनिक

हाफ-पैंट व बनियान पहने फुटबाल खेल रहे थे। दूसरी ओर मैदान में वाली-बाल हो रहा था।

सतीश बोला—"रानीखेत एक सैनिक छावनी है। एक बार एन० सी० सी० के कैम्प में मैं यहां आ चुका हूँ!"

"तो फिर आप बन्दूक भी चलाना जानते होंगे!"

"हां, बहुत अच्छी तरह!"

"आज तक कितनी चिड़ियाँ मारीं?"

"बस एक!"

सुमन ने पुनः पूछा—"उसका नाम जानते हैं!"

"हाँ, पहचानता भी हूँ!"

"क्या नाम था उसका?"

"बता दूं?" सतीश ने पूछा।

"हां, हां, बताओ!"

"सुमन!"...

एक मधुर हंसी। फिर—"आप अच्छा मजाक कर लेते हैं!"

बस-स्टैण्ड पर गाड़ी रुकी। सब नीचे उतरे। होटल के एजेंटों ने घेर लिया।

सदर बाजार में ग्रैंड होटल में दोनों ठहरे। होटल का नाम तो बड़ा था, मगर अन्दर बाथ-रूम में पानी का एक टैप भी न था। छोकरा पानी की बाल्टियां लाकर रख गया।

रानीखेत में आकर दोनों को गर्मी लगी। अल्मोड़ा ठंडा अधिक था। वहां गर्म पानी से नहाते थे। यहाँ ठंडे पानी से ही नहाने की इच्छा हुई।

दोनों ने स्नान कर कपड़े बदले और बाहर घूमने निकले।

शाम होते ही रानीखेत की रौनक बदल गई। बाजार में काफी चहल-पहल दृष्टिगत होने लगी।

दोनों टहलते-टहलते बाजार के अन्तिम छोर तक पहुँच गए।

"आज रिक्शे पर बैठने की इच्छा हो रही है।" सुमन कुछ थक-सी गई थी।

"मगर यहां तो कोई रिक्शा नजर नहीं आता।" सतीश ने चारों ओर दृष्टि दौड़ाई।

"अच्छा, चाय तो कहीं मिलेगी ?"

हां, हां, चाय की क्या कमी !" सतीश बोला—"सामने दुकान पर लिपटन व ब्रूक बांड दोनों तरह की चाय के पैकेट सजे हुए हैं। आपको कौन-सी चाय पसन्द है ?"

"यह भी पूछ लीजिए, छोटा पैकेट चाहिए या बड़ा ?"

"हां, खूब याद दिलाया। बोलिए कौन-सा पैकेट चाहिए ?" सतीश ने विनोदपूर्वक पुनः पूछा।

"आप मजाक उड़ा रहे हैं और मुझे बहुत तेज भूख लग रही है।"

"फिर ऐसा करें, कहीं चलकर खाना ही खा लें !"

"इस वक्त आपको खाना कहां मिलेगा ?"

"जहां पैसा खर्च करेंगे !" सतीश बोला।

एक बड़े रेस्टोरेंट में दोनों जाकर बैठ गए। बेयरा आया। सतीश ने दो गिलास ठंडा पानी लाने को कहा। सुमन ने प्रश्नवाचक नेत्रों से सतीश को देखा। उसने झट मेनू उसकी ओर बढ़ा दिया।

बेयरा पानी लाया।

"मेम साहब के लिए जल्दी चाय लाओ !"

बेयरा 'अच्छा साहब' कहकर चल दिया। सुमन बोली—"कहाँ खाना खिला रहे थे और कहाँ खाली चाय पर ही टरका रहे हैं !"

"मेनू आपके हाथ में है, जो चाहिए खाइए !"

इस बार बेयरा आया तो सुमन बोली—"खाना तैयार है ?"

"अभी नहीं।"

"फिर क्या तैयार है !"

वेयरा गरदन हिलाता बोला—"जो आप आर्डर कीजिए !"

"मैंने खाना माँगा, वह कहाँ तैयार है ?"

"हो रहा है, बस एक घंटे बाद मिल जाएगा।" बेयरा झिझकता बोला।

"तब तक आप गर्म चाय पीकर दिमाग को ठंडा और भूख को हल्का कीजिए !" सतीश बोला।

"जी साब !" वेयरा ने चाबीवाले खिलौने की तरह गर्दन हिलाई।

सुमन को भी हँसी आ गई।

सतीश ने पूछा—"आपके लिए क्या मँगाऊँ। मांस-मछली, अंडा-मुर्गा, साग-सब्जी, दही-पापड़, मिर्च-मसाला…जो चाहिए खाइए !"

सुमन समझ गई कि आज ये मजाक के मूड में हैं, हर बात को हँसी में उड़ा देंगे। उसने बेयरे को आर्डर दिया—"पकौड़ी व समोसे लाओ !"

बेयरा चला गया। सुमन बोली—"आपका बचपना अभी गया नहीं। हर वक्त मज़ाक ठीक नहीं लगता।"

"तुम्हीं ने तो बालक-मिठाई खिलाई थी।" सतीश बोला—"जब से वह खाई है, मैं छोटा होता जा रहा हूँ। कहीं सचमुच बालक बन गया तो तुम्हारा क्या होगा ?"

"मेरी चिन्ता न करो !" सुमन बोली—"तब मुझे तुम्हारी चिन्ता करनी होगी। किसी स्कूल में नाम लिखवा दूँगी। फीस के रुपये भी भर दिया करूँगी !"

"मगर फिर मेरे साथ चलते तुम्हें शर्म नहीं आएगी ?"

"क्यों ?"

सतीश बोला—"लोग कहेंगे पाँच हाथ की लम्बी औरत का दो-फुटा पति !"

"तुम मेरे पति हो !"

"और नहीं तो क्या ?"

"मैं तो सिर्फ मुंशी समझती थी !" सुमन बोली।

सतीश ने इतनी ज़ोर का ठहाका लगाया कि वहाँ बैठे सभी लोग आश्चर्य से उसे घूरने लगे।

"डोण्ट बी सिली !" सुमन ने धीरे से टोका।

समोसे व पकौड़ियाँ आ गईं। दोनों चुपचाप प्लेटें खाली करने लगे।

दूसरे दिन शाम को पिक्चर का प्रोग्राम बना।

चढ़ाई ज्यादा थी। चढ़ते-चढ़ते सुमन हाँफ कर बैठ गई। सतीश भी थक गया था, मगर चिढ़ाने के लिए बोला—"अरे, तुम अभी से बुढ़िया हो गईं ! कोई देखेगा तो क्या कहेगा ?"

"शादी के बाद सभी औरतें बूढ़ी हो जाती हैं।"

'और मर्द !"

"नन्हें सुकुमार बच्चे !" सुमन उठते हुए बोली।

"तभी औरतें उनकी नाक में नकेल डालकर बन्दर की तरह उन्हें नचाती हैं !" सतीश बोला।

"इसमें बुरा मानने की क्या बात है। बड़ी-बूढ़ियों का और काम ही क्या होता है ? बच्चों की ठीक से देख-भाल करना !" सुमन हँसते हुए बोली।

"अच्छा जी !" सतीश ने बात को घुमाया—"अभी से बच्चों का शौक पैदा हो गया !"

"मुझे श्राप न दो !" सुमन गम्भीर हो उठी।

"क्या बच्चे श्राप होते हैं !"

"नहीं, भगवान का लघुरूप होते हैं !" सुमन बोली—"मगर अभी

मैं बोझ न उठा सकूंगी !"

"मगर भारतवर्ष में विवाहिता स्त्री को आशीर्वाद ही दिया जाता है, 'पुत्रवती-सौभाग्यवती हो !' " सतीश बोला।

"सभी पुत्रवती माताएं, सौभाग्यशालिनी नहीं होतीं !" सुमन बोली--"हर चीच समय पर ही ठीक लगती है। हमारे यहां बहुत छोटी अवस्था में लड़कियों का ब्याह कर दिया जाता है। जब उनके खाने-खेलने के दिन होते हैं, तब उनकी जल्दी गोद भर जाती है। और फिर औरत " पत्नी या प्रेमिका न रहकर, सिर्फ मां बन जाती है। मां,. प्रतिवर्ष एक बच्चा जननेवाली मशीन !"

"स्त्री की पूर्णता, उसके मातृत्व में ही है !" सतीश बोला।

"ठीक है, मगर स्त्री का पत्नीत्व भी कुछ अपेक्षा रखता है। मातृत्व की महत्ता के गीत गाते-गाते भारतीयों ने पत्नीत्व की सदा उपेक्षा की। मातृत्व तो स्त्री के विकास का अन्तिम सोपान है। अगर कोई बच्चा, छोटी अवस्था में बड़ों की तरह ज्ञान की बातें करने लगे, तो वह भले ही हमारे आदर का पात्र बन जाए, मगर उसे हमसे वह स्नेह नहीं प्राप्त हो सकता, जो उसी अवस्था के एक तुतलाते या नटखट बालक को देखकर उसके प्रति अनायास हमारे हृदय से स्वतः उमड़ पड़ता है।" सुमन बोली।

सिनेमा-हाल आ गया, अतएव वार्ता का क्रम टूट गया।

पिक्चर शुरू हो चुकी थी। हाल एकमंजिला था। टिकट खरीदकर दोनों अन्दर गए। अन्धेरे में टटोलते हुए दोनों दूसरी पंक्ति के बीच जाकर बैठ गए। उस पंक्ति में दूसरा कोई नहीं बैठा था।

साधारण भारतीय चित्रों की भांति इसमें भी नाच-गाने ठूस-ठूसकर भरे हुए थे। दो एक प्रणय-दृश्यों से उत्तेजित होकर सतीश ने सुमन की गर्दन में अपनी बांह डाल दी। सुमन ने भी समर्पण के भाव से उसके कन्धे पर अपना सर रख दिया।

इण्टरवल में जब बत्तियाँ एकसाथ जल उठीं तब दोनों नींद से जागे।

पीछेवाली पंक्ति में बैठी रेखा इस युगल जोड़े को बड़े ध्यान से देख रही थी। उसके मन में यह विचार एक कीड़े की तरह रेंग रहा था कि उसकी बगलवाली सीट अभी तक खाली है। उसे किसी के कन्धे पर सर रखने का अभी तक अधिकार नहीं मिला।

इंटरवल में बत्तियां क्या जलीं, रेखा को एकसाथ सैकड़ों बिच्छुओं ने जैसे डंक मारा।

अरे, यह तो वही सांवली लड़की है··· सुमन ! साथी की तलाश में ही तो बहनापा तोड़कर चली गई थी।···

आज उसकी मांग में सिन्दूर है··· बगल में प्रेमी है···और मैं···मैं ?

····करोड़पति बाप की इकलौती रूपवती बेटी, क्या नहीं है उसके पास !

मगर फिर क्यों कमल ने उसे धोखा दिया ?···रमेश इतना पास आकर भी, क्यों इस प्रकार चला गया ! उसने एक पत्र लिखना भी जरूरी नहीं समझा !

एकदम से रो पड़ने की इच्छा हुई। मगर इस मामूली-साधारण लड़की के समक्ष वह अपनी हार क्यों स्वीकार करे ?

वह धीरे से उठी और चुपचाप बाहर निकल गई। अधूरी पिक्चर छोड़कर ही सीधे होटल चली गई।

मन के किसी कोने से आवाज़ उठी—'उसे सुमन को विवाह के लिए बधाई तो देनी चाहिए थी !··· खाने पर नहीं, तो कम से कम एक वक्त चाय पर ही दोनों को आमंत्रित करना चाहिए।···'

'नहीं··· नहीं !' उसने उस आवाज़ को दबाते हुए कहा—''कौन है सुमन उसकी ? वह क्यों बधाई दे उसे ? जब कमल के निमंत्रण के उत्तर में बधाई का छोटा-सा संदेश भी नहीं भेज सकी····तो फिर इस मामूली

लड़की के सौभाग्य पर वह नकली प्रसन्नता क्यों प्रकट करे ? इस बदतमीज़ ने तो एक निमंत्रण का कार्ड भी नहीं भेजा !…'

१३

उस रात रेखा को नींद न आई।

दूसरे दिन प्रातः ही उसने रानीखेत छोड़ने का निश्चय कर लिया। उसे आशंका थी, सुमन से फिर कहीं भेंट न हो जाए। वह सुमन के समक्ष लघु नहीं बनना चाहती थी।

मगर जाए कहाँ ?

उसे लगा, इतनी बड़ी दुनिया में उसके लिए जैसे कोई उपयुक्त स्थान न हो।

जोसेफ अखबार के साथ कमरे में आया—"गुड मार्निंग, मिस रेखा। एक खुशखबरी सुनाऊँ ?"

रेखा ने स्वीकृति में केवल गर्दन हिला दी।

"इस महीने की २१ वीं तारीख को मसूरी के सवॉय होटल में 'मिस मसूरी' का चुनाव होने जा रहा है। भारत के सभी प्रदेशों से सुन्दरियाँ इस वार्षिक प्रतियोगिता में भाग लेने को मसूरी आ रही हैं।…" जोसेफ खबर सुनाने लगा।

"बस, आगे न पढ़िए !" रेखा ने भारी मन से टोका।

"वाई, बस !" जोसेफ बोला—"यह आपके लिए गोल्डेन मौका है ! आपके पास रूप है, दौलत है…क्या नहीं है ! एक बार 'मिस मसूरी' हो जाएँ, फिर देखिए कितनी शोहरत मिलती है। बड़े-बड़े राजे-महराजे आपसे प्यार की भीख माँगेंगे !"

उदास रेखा के मुँह से अनायास ही निकला—"लगता है, भगवान मेरे हाथ में प्यार की रेखा बनाना भूल गया ! मुझसे भला कौन प्यार की भीख माँगने आएगा !"

रेखा को उस दिन रानीखेत छोड़ना ही था लेकिन जोसेफ मसूरी चलने की ज़िद पकड़े था। हारकर रेखा ने स्वीकृति दे दी। सामान बँधने लगा।

रेखा ने सोचा, 'एक बार वह मिस मसूरी बन जाए, फिर कमल-कल्पना को भी पता चल जाएगा कि वह कौन है! सुमन को भी अपने छोटेपन का बोध हो जाएगा! मगर रमेश?···

उसका जाना इतना अनपेक्षित हुआ कि उसे पता नोट करने की भी सुध न रही। आखिर कब तक वह उससे पत्र की प्रतीक्षा करती रहेगी?····

उसे लगा, पुरुष-मात्र स्वार्थी होता है।···

मसूरी पहुँचकर रेखा को पता चला कि सवॉय होटल में बिल्कुल जगह नहीं है। बड़ी कठिनता से उसे हैकमन्स में एक कमरा मिला।

जोसेफ ने सवॉय होटल जाकर रेखा का नाम प्रतियोगियों की सूची में लिखा दिया। एडमीशन फीस भी खुद ही जमा कर दी।

रेखा मानसिक दृष्टि से उस मुकाबले के लिए बिल्कुल तैयार न थी। मगर जोसेफ हाथ धोकर उसके पीछे पड़ा हुआ था।

समझ नहीं पा रही थी कि इसमें उसका क्या स्वार्थ है!

धीरे-धीरे रेखा भी उधर आकर्षित होने लगी। कई स्टेटों की राजकुमारियाँ भी आई हुई थीं। वे पानी की तरह पैसा बहा रही थीं। रेखा राजकुमारी न सही ·· मगर रुपये-पैसों के मामले में किसी से कम न थी। उसने अपनी चेक-बुक तार देकर मंगवा ली।

जैसे-जैसे २१ तारीख निकट आने लगी, रेखा के हृदय की धड़कनें तेज होती गईं। उसे लगा, जीवन की बहुत बड़ी परीक्षा में जैसे वह बैठने जा रही हो।···असफलता की कल्पना-मात्र से वह सिहर उठती! शाम को माल रोड, कुलड़ी या कैमल्स बैक रोड पर घूमते हुए रेखा को लगता, सब नजरें उसी को जैसे घूर रही हैं।

जोसेफ रोज नई-नई खबरें लाता। आज उसका चेहरा उतरा हुआ था।

"क्या बात है, जोसेफ!"

"कुछ नहीं!" आरामकुर्सी में धंसता वह बोला।

"कोई नई खबर!"

वह उबल उठा—"सब जगह आजकल रिश्वत का बाजार गर्म है। सुना है, एक राजकुमारी ने निर्णायकों को पचीस हजार रुपये तक घूस देने का प्रलोभन दिया है। इसके अतिरिक्त एक डिनर भी वह सब अतिथियों को देगी। पांच हजार रुपया उसने डिनर के लिए मैनेजर को पहले ही दे दिया है।"

"इसमें घबराने की क्या बात है?" रेखा बोली—"तुम निर्णायकों को तीस हजार का आफर दे दो। मैं भी एक डिनर सबको दे दूंगी!"

जोसेफ की बाछें खिल गईं।

२१ तारीख भी आ पहुँची।

आज होटल की रौनक ही बदली हुई थी। पूरा होटल जगमगा रहा था। शाम से ही कारों का तांता बाहर लग रहा था। अन्दर हॉल में एक घंटा पहले से ही सभी कुर्सियाँ भर गई थीं। बैण्ड मधुर स्वरों में वातावरण को और रंगीन बना रहा था।

जोसेफ के लिए रेखा ने नया सूट बनवा दिया था। आज उसके ठाट ही दूसरे थे। उसने पहले से ही रेखा का आवश्यकता से अधिक प्रचार कर रखा था। सबको पता चल गया कि हिन्दुस्तान के बहुत बड़े बिजनेस मैगनेट करोड़पति सेठ दीवानचन्द की इकलौती लड़की इस प्रतियोगिता में भाग ले रही है।

रेखा रूपवती तो थी, मगर उस प्रतियोगिता में भाग लेनेवाली दूसरी सुन्दरियां भी एक से बढ़कर एक रूपवती थीं। रूप की चकाचौंध

से सबकी आंखें फटी जा रही थीं। अगर सौ छोटे बल्बों के बीच एक बड़े पावर का बल्व हो तो वह दूर से सबको अपनी ओर आकर्षित करता है। मगर यहां तो सभी हजार वाट के बल्व थे। आँखें किसी पर ठहरती न थीं।

फैशन-परेड खत्म हुई।

हॉल तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठा।

सांस रोके सब निर्णय की प्रतीक्षा करने लगे।

सर्वसम्मति से रेखा मिस मसूरी चुनी गई। उसके सर पर ताज रखा गया।

एक साथ अनेक फ्लैश बल्ब जले और फ्यूज हो गए। फोटोग्राफर हर एंगिल से चित्र लेने लगे।

रेखा के पांव ही धरती पर नहीं पड़ रहे थे। एक क्षण को उसे लगा, जैसे जीवन में आज तक जो कुछ उसने खोया, वह सब आज पा लिया है।

कल सुबह सब अखबारों में उसका चित्र छपेगा।....

कल्पना-मात्र से उसे रोमांच हो आया।

जोसेफ ने दूसरे दिन ढेर सारे अखबार लाकर रेखा के सामने रख दिए। सभी पत्रों में मुखपृष्ठ पर मिस मसूरी का चित्र छपा था।

रेखा पर नशा-सा छाने लगा।

जोसेफ ने प्रस्ताव रखा—"अब मेरे साथ आप बम्बई चलिए। मैं कई फिल्मों के कंट्रैक्ट आपको दिलवा दूँगा। एक साल में ही आप सोने के महल खड़े कर लेंगी!"

"नहीं जोसेफ!" रेखा बोली—"मुझे पैसा नहीं चाहिए। जो कुछ शोहरत मिल सकती थी, वह भी आज मिल गई।"

"आपका कैरियर बन जाएगा। आप मेरी बात एक बार मानकर तो देखिए!" जोसेफ ने आग्रह किया।

रेखा की दुखती रग पर जैसे अनजाने उसने हाथ रख दिया हो। वह तड़पकर बोली – "पैसा, शोहरत, कैरियर···यह सब एक औरत के लिए कुछ भी माने नहीं रखते। औरत को कुछ और भी चाहिए, जो इन सबसे भी ज्यादा कीमत होता है···!"

जोसेफ ने चट टापिक बदला—"आपने फादर को टेलीग्राम भेजा या नहीं ?"

"नहीं !" रेखा बोली—"जरूरत भी क्या है ? अखबारों से उन्हें खुद ही पता चल जाएगा !"

आज रात होटल की तरफ से मिस मसूरी के चुनाव की खुशी में एक शानदार डिनर का आयोजन निमंत्रित व्यक्तियों के लिए किया गया। कहने को होटलवालों का सारा इन्तजाम था, मगर पैसे मिस मसूरी को देने पड़े थे।

बड़ा शानदार डिनर था। बैण्ड बराबर बज रहा था। डिनर के बीच ही रेखा को अपने पिता का बधाई का एक्सप्रेस तार मिला। बधाइयों के फूलों से वह दबी जा रही थी।

डिनर खत्म हुआ। एक-एक कर अतिथि जाने लगे। रेखा के हाथ में बधाई का जो अन्तिम फूल पकड़ाया गया, उसका कांटा चुभ गया !

कमल और कल्पना थे।

"कान्ग्रेचुलेशन्स, मिस रेखा, ओ सारी, मिस मसूरी !"

रेखा ने हाथ तो अवश्य जोड़ दिए, मगर मुख से एक शब्द न निकला। उसे लगा, किसी ने कानों में जैसे शीशा गलाकर छोड़ दिया हो – "मिस·· रेखा···, मिस·· मसूरी !"

मिसेज कमल का 'मिस' शब्द पर जोर देना उसे खल गया। उसे लगा मिस मसूरी जैसे मिसेज कमल के समक्ष बहुत छोटी हो गई है। वह मिस मसूरी भले ही बन गई, मगर मिसेज कमल इस जीवन में कभी न

बन सकेगी। उसके पिता की सारी दौलत भी उसे वह स्थान न दिला सकेगी, जो कल्पना ने उससे छीन लिया !···

रेखा का मूड एकदम बदल गया।

वह सीधे होटल पहुँची। अपने कमरे में पहुँचकर जोसेफ से बोली—"तुम कौन-सी शराब पीते हो !"

"जो मिल जाए !"

'जाओ, जो बढ़िया से बढ़िया व कीमती से कीमती शराब हो···दो बोतल ले आओ !"

जोसेफ को मुंहमांगा वरदान मिला। इस अवसर की न जाने वह कब से प्रतीक्षा में था।

इस वक्त आया भी वहां न थी।

शराब आई। रेखा आज शायद अपने को पिटा देना चाहती थी। एक पेग खाली होता, जोसेफ झट दूसरा भर देता। आज जोसेफ खुद पी कम रहा था, पिला ज्यादा रहा था। उसकी आंखों में दूसरा ही नशा छा रहा था। पीते-पीते रेखा बेसुध हो बिस्तर पर लुढ़क गई।

जोसेफ को लगा, आज उसे इतने दिनों के धैर्य व प्रतीक्षा का फल मिल जाएगा। बड़ी मुश्किल से आज चिड़िया जाल में फंसी है। रेखा की दौलत और रूप ने ही उसे बांध रखा था। दौलत जितनी वह बटोर सकता था, बटोर चुका था। आज रूप का प्याला भी सामने पड़ा हुआ था।

उसने उठकर धीरे से किवाड़ बन्द किए।

रेखा नशे में तो थी, मगर होश अभी कुछ बाकी था।

किवाड़ बन्द होने की आवाज़ से उसकी आंखें खुलीं। उसे सब कुछ घूमता नज़र आ रहा था। आंखों पर बढ़ा ज़ोर डालने पर वह देख सकी, जोसेफ एक दैत्य की भांति उसे निगलने को आगे बढ़ा आ रहा है।

वह चिल्लाई— "गेट आउट''''यू स्वाइन !"

जोसेफ हंसा—"मैंने तुम्हें मिस मसूरी बनाया और तुम एक रात के लिए मिसेज़ जोसेफ न बन सकोगी !..."

जोसेफ इस वक्त एक पशु बन चुका था। उसने रेखा को बांहों में जगड़ लेना चाहा।

रेखा का नशा उड़ गया। उसने जोर से दांत काटकर उसे अलग किया। फिर टेबुल पर पड़ी शराब की खाली बोतल उठा ली—

"तुम बाहर निकल जाओ, नहीं तो मैं तुम्हारा खून कर दूँगी !"

जोसेफ का चेहरा पीला पड़ गया।

रेखा ने उसके सर को लक्ष्य कर बोतल मारी। मगर जोसेफ बैठ गया। बोतल दीवाल से टकराकर चूर-चूर हो गई। बड़ी तेज़ आवाज हुई।

रेखा ने दूसरी बोतल उठाई। जोसेफ घबड़ा गया। कहीं बोतल टूटने की आवाज़ सुनकर कोई आ गया तो हाथों में हथकड़ियां पड़ जाएंगी।

गिड़गिड़ाया—"मुझे माफ करो। नशे में मैं बहक गया था। कल सुबह मैं मसूरी से चला जाऊंगा।"

'कल नहीं, अभी, इसी वक्त यहां से निकल जाओ'''कमीने !" रेखा चिल्लाई।

भीगी बिल्ली की तरह जोसेफ कमरे से बाहर निकल गया।

१४

दूसरे दिन सुबह जब रेखा उठी, उसका बदन तप रहा था। उसका मनुष्य-मात्र पर से विश्वास उठ गया। जोसेफ, जिसे पालतू कुत्ते की तरह उसने प्यार से पाला, वह उस वफादार जानवर से भी नीच

निकला। उसे अपने पर क्रोध आ रहा था कि उसे जीवित बाहर जाने क्यों दिया ?···ऐसे नीच पशु को मारकर ही पृथ्वी का बोझ कुछ हल्का किया जा सकता है।····

टेलीफोन पर तगादा आया डिनर के बिल के रुपयों के लिए।

रेखा चौंकी। क्या जोसेफ सब रुपये हज़म कर गया ?···

कहीं उसने धोखा देकर तीस हज़ार रुपये भी तो हज़म नहीं कर लिए ! उसने बैंक को फोन किया।

सारी कलई खुल गई। सात दिन पहले जोसेफ ने पचीस हज़ार रुपये का एक ड्राफ्ट बम्बई के लिए बनवाया था।

हैकमैन्स होटल के मैनेजर ने सूचित किया कि सैकड़ों रुपयों की विलायती शराब वह पी गया।

रेखा निर्णय नहीं कर पा रही थी कि वह पुलिस को सूचित करे या न करे। तभी एक पत्र डाकिया दे गया।

पत्र ने रेखा का मूड बदल दिया। इसी पत्र की उसे इतने दिनों से प्रतीक्षा थी।

उसने कमरा बन्द कर लिया। फिर आरामकुर्सी पर लेटकर वह गौर से लिफाफा देखने लगी। रमेश ने नैनीताल के पते पर पत्र भेजा था। होटलवाले ने उसे रानीखेत के पते पर रीडाइरेक्ट कर दिया था। जिस दिन रेखा रानीखेत से चली, दूसरे दिन ही यह पत्र वहां पहुँचा। मोहर में तारीख देख, रेखा समझ गई।

बन्द लिफाफा हाथ में पकड़े वह बहुत देर तक सोचती रही, इसमें क्या लिखा होगा। हारकर उसने लिफाफा खोला। पत्र लम्बा था।

"मिस रेखा,

"तुम्हें मैं चाहकर भी इतने दिन पत्र न लिख सका। इसे तुम अपनी उपेक्षा या मेरी मजबूती मत मान लेना। इसे अपनी लापरवाही या आलस्य बताकर क्षमा मांगने का बहाना भी नहीं ढूँढ़ना चाहता।···

"मैं नहीं जानता, मेरे प्रति तुम्हारी जो भावनाएं थीं, वे इस पत्र को पढ़कर कहां तक स्थिर रह पाएंगी। मगर इतना वचन तो देना ही पड़ेगा कि तुम मुझे कपटी या धोखेबाज समझ कर हमेशा के लिए भुला न दोगी।

"यह सच है, कभी तुमने मुझसे और मैंने तुमसे प्रेम किया। अगर तुम बुरा न मानो तो मैं उसी प्यार की सौगंध खाकर कहना चाहूँगा, मैं आज भी तुमसे प्यार करता हूँ। शरीर से परे किया जानेवाला प्यार, जिसे दार्शनिक निर्लिप्त आत्मिक प्यार की संज्ञा देंगे; उसे उस रूप में न भी स्वीकार करना चाहो तो भी मानना पड़ेगा, मात्र हाड़-मांस का स्थूल शरीर ही प्यार की अन्तिम सीमा नहीं, साधन या आधार भले ही हो!!

"अगर मैंने तुम्हारी कुंआरी सुन्दर देह को ही प्यार का छोर समझा होता, तो शायद मुक्तेश्वर के उस एकांत कमरे में तुम्हारे पास मिसेज अग्रवाल को सोने का अवसर न देता। उस वक्त मैंने तुमसे मात्र मनुष्यता का व्यवहार किया था। किसी धर्म या नैतिकता के डर से तुम्हारे शरीर की उपेक्षा नहीं कीं थी।

"मैं विवाह को भी प्यार की मंजिल नहीं मानता। विवाह शरीर के उन्मुक्त भोग की खुली सामाजिक स्वीकृति भले ही हो, प्यार का अंतिम सोपना नहीं!

"तुम यह सब ऊल-जलूल बात पढ़कर सोच रही होगी कि आज मैं इतना गम्भीर दार्शनिक कैसे बन बैठा हूँ। मैं कैसे बताऊं रेखा, जीवन में समझौतावादी होना कितना आवश्यक होता है। अगर मनुष्य सहनशील न होता तो शायद वह एक पल जी नहीं पाता।

"शाहजहां ने अपनी प्यारी मुमताज़ की याद में ताजमहल बनाया। कहते हैं, इस भव्य इमारत को बनने में पूरे बाईस वर्ष लगे! धैर्य की भी कुछ सीमा होती है। जरूर शाहजहां का दिल भी संग का बना होगा, जो मुमताज के बिना भी इतने दिन तक टूटा नहीं, धड़कता रहा। अपने

लुटे हुए प्यार की यादगार को पत्थरों के सांचे में ढलता देखता रहा। यहीं मनुष्य की सीमा है और मजबूरी भी !

"आशा है, अब तुम मानसिक दृष्टि से उस चोट को सहने को तैयार हो गई होगी…जिसे मैं इतने दिनों तक टालता रहा।

"रेखा, पिताजी बीमार नहीं थे। उन्होंने बीमारी का बहाना बना कर मुझे बुलवाया था। पिताजी पुराने जमाने के आई० सी० एस० अफसर हैं। अपने दिए हुए वचन से कैसे फिर सकते हैं! उनके मित्र रायबहादुर रायकृष्णदासजी के पैसे पर ही मैं विदेश उच्चशिक्षा के लिए गया था। पिताजी ने उन्हें वचन दिया था कि जिस दिन मेरी नौकरी लग जाएगी, वह उनकी कन्या को पुत्रवधू के रूप में ग्रहण कर लेंगे।

"रायसाहब की कन्या में कोई दोष नहीं है। वह पढ़ी-लिखी, कुलीन और रूपवती कन्या है। उसे अगर कभी मैंने चाहा नहीं, तो नफरत भी नहीं की।…

"तुम अनायास मेरे जीवन में आई। मुझे लगा, मेरी स्वप्नप्रिया मुझे प्राप्त हो गई। मैं आकर्षण व प्यार की डोर में बंधा तुम्हारे आगे-पीछे घूमता रहा।

"घर से माताजी के पत्र आते और मैं जला देता। तुम्हें बताने की उस वक्त मैंने जरूरत नहीं समझी। मगर पिताजी की बीमारी के तार की उपेक्षा न कर सका। जाना ही पड़ा। उस वक्त क्या पता था, मैं हमेशा के लिए तुमसे बिछुड़ कर जा रहा हूँ।…"

रेखा की आँखों से मोती टपकने लगे। वह आगे पढ़ने लगी :

"…इसके आगे की कहानी छोटी-सी है। मेरे घर में कोई फिल्मी ड्रामा नहीं घटा। पिताजी ने आत्महत्या की धमकी न दी। मां ने प्यार की सौगन्ध नहीं दिलाई। उन्होंने शादी का दिन पहले से निश्चित कर रखा था। मैं मुहूर्त के समय घोड़ी पर बैठा, बाजे बजे, ढेर सारा आतिश-बाजियां छूटीं, बन्दूकें गरजीं, फूलों के हार भी पहनाए गए, अग्नि को

साक्षी देकर मैंने पत्नी ग्रहण की, सप्तपदी हुई""और मैं एक से दो बन गया।"'

"तुम मुझे भले ही धोखेबाज या धूर्त की उपाधियों से अलंकृत करना चाहो, मगर रेखा, एक बात याद रखना। मैं शादी कर भी पराया नहीं बना। मैंने अपनी पढ़ी-लिखी पत्नी को सब कुछ बता दिया। तुम्हें यह पत्र भी उसी के सामने बैठा लिख रहा हूँ।

"मैं प्यार को पाप या अपराध मानने को तैयार नहीं। अगर तुम मजाक न समझो, तो मैं कहना चाहूँगा, अब तुम्हारे दो प्रेमी हो गए। मै और मेरी पत्नी। तुम हमारे घर जब चाहो, आ सकती हो। हमें तुम्हारा स्वागत कर प्रसन्नता होगी।

"अगर प्यार का मतलब एकाधिकार न समझती हो, तो मेरी शादी के समाचार से प्रसन्न न हो सकोगी तो भी दुःखी मत होना। मैं तुम्हारा दुःख न झेल पाऊँगा।

तुम्हारा ही,
रमेश"

न चाहते हुए भी आँखों से आंसुओं की फुलझड़ी छूट पड़ी। पूरा पत्र ही नहीं, रेखा भी भींग गई। अपने भाग्य पर वह न हंस ही पा रही थी, न रो ही पा रही थीं।

उसने आंखें बन्द कर लीं। बहते हुए आंसुओं को पोंछा नहीं, सूखने के लिए छोड़ दिया।

कमल की तरह रमेश को धोखेबाज, नीच कहने का उसे साहस न हुआ। न जाने क्या चीज थी, जिसने आज संगमरमर को मोम की तरह पिघला दिया। रेखा को अपना अहं पानी की तरह तरल बनकर बहता जान पड़ा।

प्यार का मतलब स्वामित्व, विवाह या शारीरिक एकाधिकार ही तो नहीं! प्यार की नई परिभाषा ने उसके बौद्धिक तनाव को कुछ हल्का

किया। मानसिक ग्रंथियाँ ढीली पड़ने लग। उसे लगीं, वह मात्र एक नारी है, किसी करोड़पति बाप की बेटी या सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी मिस मसूरी ही नहीं।··

उसने आया को सामान बांधने को कहा।

उसके पिता इस वक्त कलकत्ते में थे। उसने कलकत्ता एक तार भेजकर अपने पहुँचने की सूचना दी।

जोसेफ के सारे बिलों का भुगतान किया। ट्रंक काल कर देहरादून एक्सप्रेस में कलकत्ते के लिए फर्स्ट क्लास का एक कूपे रिजर्व कराया।

दूसरे दिन मिस मसूरी ने मसूरी से विदा ली।

देहरादून से जब गाड़ी चली तो रेखा ने एक ठंडी सांस ली। उसे लगा, कमल के विवाह के निमंत्रण-पत्र को देखकर सुलग उठनेवाली रेखा, लखनऊ छोड़कर नैनीताल भागनेवाली रेखा···आज मर चुकी है। उसकी आग ठंडी हो गई। अब धुआँ भी शेष नहीं रहा जो किसीकी आंख में एक बूँद आंसू ला सके·।

अगले स्टेशन पर गाड़ी रुकी। न जाने कहां से कुछ पत्रकार मिस मसूरी का इण्टरव्यू लेने पहुंच गए।

रेखा ने पहले टालना चाहा। मगर जब वे बहुत हठ करने लगे तो उसने इतना ही कहा, "नारी का वास्तविक स्थान उसका घर है, क्लब, थियेटर या सिनेमा नहीं। प्यार नाटक या सिनेमा में सुन्दर भले ही दिखे, वास्तविक जीवन में उतना मधुर व सफल नहीं घटित होता!"

गार्ड ने सीटी दी। एक युवक पत्रकार ने पूछा—"क्या आपने कभी किसी से प्यार किया है?"

रेखा के पास इस प्रश्न का उत्तर न था।

गाड़ी चल पड़ी। धुएं के काले बादलों के साथ ही वह प्रश्न भी उड़ गया।

रेखा को लगा, उसका प्रयोग असफल सिद्ध हुआ।

मिस मसूरी बनकर ही उसे क्या मिला? समाचारपत्रों में जरूर उसके चित्र छप गए, बधाइयों के अनेक तार भी जरूर उसे प्राप्त हुए, स्टेशन पर पत्रकार भी इन्टरव्यू के लिए आने लगे...मगर क्या जीवन की यही सफलता कही जा सकती है? पैसा, शोहरत, विज्ञापन-मात्र से ही कहीं जीवन की सारी कामनाएं पूरी हो जाती हैं?...

उसे लगा, जिनके पास रूप है.. वे पैसों के लिए तरसते हैं। जिनके पास पैसा है वे रूप के अभाव को रोते हैं। जिनके पास दोनों हैं, वे शिक्षा के अभाव को महसूस करते हैं। अगर शिक्षित रूपवती स्त्री के पास प्रचुर परिमाण में पैसा भी हुआ तो वह नाम के विज्ञापन के लिए तरसती है। वह अपने भाग्य को कोसती है, क्या फायदा हुआ, इतने रूप, ऊंची शिक्षा व अतुल धन से, जब कोई जाननेवाला न हुआ!

१५

कलकत्ते पहुँचकर रेखा ने पिता के समक्ष मूक आत्मसमर्पण कर दिया।

हजारों रुपये फूंककर रेखा ने यही अनुभव प्राप्त किया कि बनी-बनाई समतल पटरियों पर जीवन की गाड़ी चलाना तो आसान है, मगर अपने लिए नई राह बनाना, हर एक के वस में नहीं।

मिस मसूरी के लिए वर ढूँढ़ने में पिता को कठिनाई नहीं हुई। बम्बई के सिल्वर-किंग सेठ सोहनलाल के इकलौते पुत्र से सम्बन्ध तय हुआ।

पिता ने रेखा को बधाई दी—विधाता ने सारा भाग्य तुझे ही दे दिया। पिता की करोड़ों की सम्पदा के साथ तू ससुराल की भी करोड़ों

की सम्पत्ति की मालकिन बनेगी। जितना पैसा मैं सारी जिन्दगी बाल सफेद कर भी न कमा सका, उससे अधिक दौलत तुझे इस विवाह के बाद अनायास प्राप्त हो जाएगी।"...

रेखा सिर्फ हंस दी। सेठ दीवानचन्द भी उसकी हंसी में छिपे व्यंग्य को न समझ सके। मन में रेखा ने प्रार्थना की—'ऐसा भाग्य किसी लड़की को न मिले।'

धूमधाम से विवाह हुआ। बड़े-बड़े मंत्री, महाराजे, सरकारी अफसर विवाह में सम्मिलित हुए। राष्ट्रपति व प्रधान मंत्री ने भी शुभकामना के सन्देश भेजे।

रेखा पिता को अकेला बिलखता छोड़ ससुराल चली गई। हवाई जहाज में बैठी रेखा को मां बहुत याद आ रही थी। लड़कियां प्रायः डोली में विदा होती हैं। जो तनिक भाग्यवान होती हैं वे मोटर में बैठकर विदा होती हैं। मगर रेखा के भाग्य का क्या कहना! वह हवाई जहाज में उड़ कर ससुराल जा रही थी। मिस मसूरी जो ठहरी!

बम्बई में अपनी आलीशान कोठी में पहुँच कर उसकी आँख खुल गई। लोग बेकार ताजमहल के गीत गाते हैं। काश! मैरिन ड्राइव के किनारे, बम्बई के सेठों की इमारतों के अन्दर वे लोग झांक पाते...इन्द्र-लोक की कल्पना भी भूल जाते।

ऐश के कितने सामान जमा थे! उसे ससुराल से इतने गहने चढ़े थे कि अगर कोई जौहरी दुकान खोलकर बैठ जाता, तो एक-दो पुश्त तक कमा खाता। उसे लगा, पैसे को पैसा खींचता है।

.. उसके ससुर ने मुंहदिखाई में पाँच लाख रुपये दिए।

रेखा के लिए सबकुछ स्वप्नवत् था। वह पांच लाख का चेक हाथ में पकड़े सोच रही थी, इस देश में करोड़ों ऐसे लोग होंगे जिन्होंने कभी एक

लाख रुपया जिन्दगी में न देखा होगा।...वह कितनी भाग्यवान है, उसे मुंहदिखाई में पाँच लाख मिला !

वह अपने कमरे की खिड़की पर खड़ी समुद्र की तरफ देख रही थी। काली लहरें पत्थरों से टकरा रही थीं। नीचे सड़क पर मोटरें आ-जा रही थीं, जीवन गतिशील था।

उसे चाँदी के सिक्कों के बदले अपना शरीर बेचनेवाली अभागिनें याद आईं। अपने सोने-से निर्मल तन को गला कर, यौवन को सड़ाकर भी एक वेश्या जीवन-भर में इतना रुपया नहीं बटोर सकती।...वह कितनी भाग्यवान है ! !

न जाने क्या हुआ, उसने चेक के टुकड़े-टुकड़े किए और हवा में उड़ा दिए। उसे लगा, अगर इस वक्त उसके हाथ में चेक न होकर, सचमुच करेंसी नोट भी होते, तो वह उन्हें हवा में उड़ा देती।...बेकार लोग इन कागजों को खून-पसीना बहाकर जोड़ते हैं। अगर इन कागजों से जीवन में वास्तविक प्रसन्नता व सुख के फूल खरीदे जा सकते तो आज रेखा इतनी अकिंचन न होती ! करोड़ों रुपये की सम्पदा होते हुए भी वह जीवन में खुशी के दो फूल प्राप्त न कर सकी।...

उसे लगा, दौलत एक बंधन है, जंजीर है।
तभी पति ने आकर कन्धे पर हाथ रखा।
रेखा ने मुस्कराने की चेष्टा की।
"सुना पिताजी ने तुम्हें पांच लाख रुपये मुंहदिखाई में दिए।"
रेखा ने स्वीकृति में केवल सिर हिला दिया।

"चलो फिर हनीमून के लिए स्विट्जरलैण्ड चलेंगे।" पति ने उत्साहित होते कहा।

रेखा ने प्रश्न किया--"पिताजी ने मुझे मुंह दिखाई में इतने सारे रुपये दिए, और आपने बिना कुछ दिए ही मेरा मुंह देख लिया ?"

शर्माते हुए पति-देवता बोले--"तुम्हें रुपये चाहिए ? बोलो कितने रुपये लोगी।"

"पचास लाख !"

माथे पर पसीना आ गया।

"तुम जानती हो बिजनेसमैन के पास इतना कैश नहीं रहता। फिर मेरे पर्सनल एकाउण्ट में तो केवल दो लाख ही होगा।"

"पिताजी से उधार मिल जाएंगे।"

"क्यों नहीं, तुम मांग लेना।"

रेखा बोली—"पांच लाख तो मैंने गरीबों में बांट दिए। मगर बदनसीब भारत में करोड़ों गरीब हैं। अगर पचास लाख भी बांट दूं तो सिर्फ एक करोड़ लोगों को आठ-आठ आने पैसे मिलेंगे। आठ आने में तो एक वक्त का भोजन भी नहीं मिलेगा। कितनी थोड़ी है दौलत हमारे पास ! "

"क्या सचमुच पांच लाख तुमने बांट दिए ?" पति महाशय को पसीना छूटने लगा।

"हां, वे मेरे रुपये थे, मैंने जैसे उचित समझा, खर्चा किया।" रेखा बोली।

अपना असन्तोष पति महाशय न छिपा सके--"कम से कम पिताजी से तो पूछ लिया होता। एक दिन में इतने सारे रुपये खर्च कर दिए !"

"आप कहें तो पिताजी से पांच लाख का कलकत्ते से ड्राफ्ट मंगवा लूं।" रेखा कड़े स्वर में बोली।

प्रेम धुआँ बन उड़ गया। पति महाशय बहाना बनाकर धीरे से खिसक गए।

रेखा खिड़की पर खड़ी होकर पुनः नीचे देखने लगी। उसकी इच्छा जोर से हंसने की हुई। मगर न जाने क्यों उसे लगा, अगर वह हंसी तो फेफड़े की पसलियां टूट जाएंगी। वह चाहकर भी हंस न सकी।

उसकी इच्छा रमेश को पत्र लिखने की हुई। वह कितनी सुखी और सौभाग्यशालिनी है आज! उसके सौभाग्य से अच्छे-अच्छे लोग ईर्ष्या करते होंगे।

ससुरजी हांफते हुए आए—"रुपये किसे दे दिए?"

"किसीको नहीं।" रेखा बोली।

"देवीदास कह रहा है कि तुमने गरीबों में सारे रुपये बाँट दिये!"

"रुपये कहाँ, वह तो चेक था!" रेखा गम्भीरतापूर्वक बोली—"इतना रुपया मैं क्या करती? मैंने चेक फाड़कर फेंक दिया।"

"टुकड़े संभालकर रखे हैं न?"

"नहीं वे तो हवा के साथ उड़ गए।"

बाहर निकलते ससुर कह रहे थे—"बहू कितनी समझदार है! मैं मैं अभी बैंक को फोन कर उस चेक का स्टाप-पेमेंट देता हूं।"

रेखा सोचने लगी, कितनी खोखली होती है इन महलों की जिन्दगी! केवल आडम्बर और नकली जीवन!!

रेखा जीवन से समझौता करना सीख रही थी।

कुछ दिन बाद ही रेखा को पता चल गया कि हनीमून के लिए स्विट्जरलैण्ड चलने का प्रस्ताव रखनेवाला पति, पति भले हो, आदमी नहीं है। पैसेवाले भी भला नपुंसक होते हैं! अगर ऐसा होता तो उसकी शादी कैसे होती?....

पति गिड़गिड़ाया—"तुम्हारा जीवन मैंने नष्ट किया। मुझे माफ करना। मैंने पिताजी को बहुत मना किया मगर वे नहीं माने। उन्होंने

मेरी शादी तुमसे नहीं की, बल्कि तुम्हारे पिता की सम्पत्ति से की है। मेरी इज्जत तुम्हारे हाथ है। यह बात अगर किसी दूसरे को मालूम हो गई तो मैं मुंह दिखाने लायक न रहूँगा।''

रेखा को अपने दुर्भाग्य पर हंसी आई। उसे लगा, उसके दुःखों का कहीं अन्त नहीं।

उसने पिताजी को पत्र लिखा--

"मैं यहाँ बहुत सुखी हूँ। मोटरगाड़ी, नौकर-चाकर किसी चीज की कमी नहीं। मेरे ससुर मेरा बहुत ख्याल रखते हैं। पाँच-लाख रुपये सिर्फ मुंहदिखाई में दिए। पति तो एकदम गऊ हैं। स्विट्जरलैण्ड चलने की रट लगाए हुए हैं....। कभी-कभी मुझे लगता है कि विधाता ने इतना सुख मेरी झोली में डाल दिया है, क्या मैं उसे झेल पाऊंगी !''

आँसू न रुक सके। पत्र गीला हो गया।

वह रात बड़ी भयानक थी।

उसका पति देवीदास कलकत्ते गया हुआ था। रेखा कमरे में पड़ी सो रही थी।

किसी ने उसे धीरे से हिलाया। वह चौंककर उठ बैठी। उसके ससुर थे।

''पिताजी....आप !''

मुंह से शराब की बू आ रही थी—''मैंने तेरा जीवन नष्ट किया है। मैं तेरे दुःखों की दवा लाया हूँ।...आखिर मुझे अपना वंश चलानेवाला भी तो कोई चाहिए !''

''पिताजी !'' रेखा चिल्ला उठी।

''और जोर से चिल्ला, आज रात तेरी आवाज सुनने के लिए इस कोठी में दूसरा कोई नहीं है !'' सेठजी अट्टहास कर उठे।

रेखा ने अन्तिम प्रयत्न किया —"मैं आपकी बेटी के समान हूँ।... मुझपर दया कीजिए !...आपके पास दौलत है आपके पास दौलत है... अय्याशी के लिए बाजार खुला है... !"

"बकवास बन्द कर।" सेठजी गरजे।

खड़ी हुई रेखा को उन्होंने जबरदस्ती गोद में बैठाना चाहा--"तू मेरी बनकर मजे से राज कर, तुझे किस बात की कमी है... !"

रेखा का सोया हुआ अहं जागा। उसने अपने को छुड़ाते हुए कहा—"मैं आपकी इज्जत करती हूँ, इसका यह मतलब नहीं, कि आपकी मनमानी चलने दूँ !.. खैरियत चाहते हो तो फौरन कमरे से निकल जाओ।"

"मेरे ही घर में मुझे आँख दिखाती है, कमीनी छोकरी !"...

रेखा ने चीजें उठाकर उनके ऊपर फेंकना शुरू किया।

उन्होंने पिस्तौल निकाली —"जान बचाना चाहती है तो सीधे से इधर आ जा !"

"मार दो गोली। मैं तुम्हारी गोली के डर से घुटने नहीं टेक दूंगी। मैं औरत हूँ, इसीलिए तुम मुझपर अत्याचार करना चाहते हो।... मगर मैं मरूंगी भी तो तुम्हें मारकर !"

सेठजी ठठाकर हंस पड़े।

"बोल तुझे क्या चाहिए ? मैं तुझे सोने से तौल दूँगा। एक बार तू मेरा कहना मान जा... !"

रेखा चुपचाप उनके पास चली गई। सेठजी की बाछें खिल गई। उन्होंने पिस्तौल टेबुल पर रख, दोनों बाहें फैलाई।

रेखा ने झपट कर पिस्तौल उठा ली।

सेठजी आगे बढ़े।

"खबरदार, जो एक कदम आगे बढ़ाया!"

सेठजी का नशा हिरन हो गया।

"मुझे माफ कर बेटी। अब कभी तेरी तरफ नजर न उठाऊंगा। नशे में मैं अन्धा बन गया था।" सेठजी काँपने लगे। मौत सामने खड़ी थी।

रेखा बोली—"जो अपनी बहू-बेटी की इज्जत से खेलने की हिम्मत कर सकता है, उस पशु को जीने का कोई अधिकार नहीं!" आज तक मैं जिन्दगी में हमेशा हारती रही। लेकिन आज तुम्हें मारकर मैं अपनी सारी हारों का बदला ले लूंगी।"

"नहीं···नहीं। मुझपर रहम करो।" सेठजी बहू के चरण पकड़ने को झुके। मगर रेखा ने गोलियों की बौछार कर उस पुण्य से भी उन्हें वंचित कर दिया।···

रेखा जानती थी, जो कुछ उसने किया वह कितना भीषण था। उसे विश्वास था, उसके पिता के होते शायद उसे फाँसी नहीं हो सकेगी। उसे, संभव था, अदालत भी निर्दोष घोषित कर मुक्त कर देती।

मगर उसे अब जीवन की कोई चाह शेष न रही। वह किसके लिए जिन्दा रहती? करोड़ों लोग जीते हैं, मगर जिन्दगी की गठरी को बोझ की तरह ढोते रहते हैं।

वह जिन्दगी किस काम की, जिसके बोझ के नीचे आत्मा कुचली जाए! वह जीवन ही क्या, जिसे प्यार करनेवाला कोई न हुआ!

उसे इस बात का दुःख न था कि उसे सब जगह झूठे मोती मिले, उसे वास्तविक वेदना इस बात की थी कि उसके सुच्चे मोतियों को किसीने प्यार न किया,…उनका सही मूल्यांकन नहीं किया।

पिस्तौल की नली अपने माथे से लगाई और अन्तिम गोली चला दी।…

न्यू दीपक प्रेस, राजघाट, वाराणसी

२९.४.२२

प्रचारक बुक क्लब

हिन्दी प्रचारक संस्थान

पो०बा०१०६, पिशाचमोचन, वाराणसी-२२१००१

